प्रयास

युवा सृजन की अनियतकालीन साहित्यिक पत्रिका

अंक-8 (दिसंबर-1988)

ਪੰਜਾਬੀ ਲਘੂਕਥਾ ਅੰਕ

संपादक: सुभाष नीरव

एवं: एकाशन: योगराज प्रभाकर

प्रयास

युवा सृजन की अनियतिकालीन साहित्यिक पत्रिका

अंक: **आठ (दिसंबर 1988)**
वर्ष: **पाँच**
एक प्रति: **पाँच रुपये**

प्रबंध एवं व्यवस्था	संपादक (1988)	पुन: प्रकाशन (2023)
श्रीमती शशि नीरव	सुभाष नीरव	योगराज प्रभाकर

सहयोगी	पत्रिका के विशेष सहयोगी व सलाहकार
• अशोक भाटिया	• रमेश बत्तरा
• श्याम सुंदर अग्रवाल	• रूप सिंह चंदेल
• अंजना अनिल	• श्याम सुंदर चौधरी

संपादकीय	2	शरन मक्कड़	41
डॉ. अमर कोमल	6	सुलक्खण मीत	44
कर्मवीर सिंह सूरी	9	हमदर्दवीर नौशहरवी	47
गुरमेल मडाहड़	11	**कुछ अन्य पंजाबी लघुकथाएँ**	
जगदीश अरमानी	13	अनवंत कौर	50
दर्शन मितवा	16	अवतार सिंह दीपक	50
दलीप सिंह भूपाल	19	जिंदर	51
पांधी ननकाणवी	21	दर्शनसिंह आष्ट	51
प्रीतम बराड़ लंडे	24	**पंजाबी के हिंदी लघुकथाकार**	
भूपिंदर सिंह पी.सी.एस.	27	अशोक भाटिया	52
मेहताब-उद-दीन	29	अशोक लव	53
मोहन शर्मा	32	कमलेश भारतीय	54
आर.एस. आज़ाद	34	प्रेम विज	55
रौशन फूलवी	36	रमेश बत्तरा	56
श्याम सुंदर दीप्ती	38	श्याम सुंदर अग्रवाल	57

पंजाबी-लघुकथा की उत्पत्ति 59
पंजाबी-लघुकथा: प्राप्तियाँ और संभावनाएँ 75
पंजाबी-लघुकथा पर रामपुरा फूल (पंजाब) में विशेष साहित्यिक समारोह 84
प्रतिक्रियाएँ 86

व्यवस्थापकीय कार्यालय	संपादकीय संपर्क
आर. ज़ेड.सी-2	F-16, नौरोजी नगर
वेस्ट सागरपुर,	नई दिल्ली
नई दिल्ली-110046	110029

संपादकीय

'प्रयास' के अंक-5 के बाद से 'प्रयास' को एक नया और विशिष्ट रूप प्रदान करने के उद्देश्य से वर्ष में एक विशेषांक निकालने की योजना बनाई गई थी। तय किया था कि भले ही वर्ष में एक अंक हम पाठकों को सौपें, लेकिन वह अंक महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट हो। इसी निर्णय के तहत प्रयास-6 'कविता अंक' और प्रयास-7 'कहानी अंक' के रूप में क्रमश: सन् 86 और 87 में प्रकाशित हुए जिसे पाठकों, विद्वानों, लेखकों ने खुलकर सराहा। इसी कड़ी में 'प्रयास' का आठवाँ अंक 'पंजाबी-लघुकथा अंक' के रूप में निकालने की योजना बनी थी। प्रयास-5 से प्रयास-8 तक की यात्रा के बीच हमें तीन वर्ष का समय मिला। इन पिछले तीन वर्षों में हमने पंजाबी-हिंदी के बहुत से लेखकों, विद्वानों से संपर्क साधा। पंजाबी-लघुकथा संग्रह खोज-खोजकर पढ़े गए। पंजाबी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही लघुकथाओं को पढ़ा, पंजाबी-लघुकथा लेखकों, आलोचकों से इस संदर्भ में बातें हुई और इन सबके सहयोग से जो सामग्री हमें उपलब्ध हुई, उसे एक अंक में नहीं समेटा जा सकता था। एक बार, योजना बनी कि 'पंजाबी-लघुकथा' पर 'प्रयास' के दो अंक निकाले जाएँ। पर, जैसा कि सभी जानते हैं कि एक लघु पत्रिका की अपनी विवशताएँ होती हैं। एक अनियतकालीन पत्रिका वह भी साइक्लोस्टाल्ड; जिसे विज्ञापनों तक का सहारा नहीं, उसकी विवशता का अंदाज़ा तो सहज ही लगाया जा सकता है। अत: हमें एक ही अंक पर संतोष करना पड़ रहा है। इसके लिए हमें बहुत सी सामग्री हटानी पड़ी है। कई अच्छे लघुकथाकारों की लघुकथाओं को हम चाहकर भी स्थान नहीं दे पाए हैं, भले ही प्रयास-8 अपने पिछले अंकों से अधिक पृष्ठों में पाठकों के सम्मुख है। हटाई गई सामग्री में से कुछेक अच्छी रचनाओं का प्रयोग हम 'प्रयास' के आगामी अंकों में करने का भरसक प्रयास करेगे।

पंजाबी-लघुकथा जो पंजाबी में 'मिन्नी कहानी' के नाम से पढ़ी-लिखी जाती है, के बारे में पंजाबी लेखकों, आलोचकों के अलग-अलग मत हैं। परंतु, एक स्वर में सभी सहमत हैं कि यह साहित्य-रूप पंजाबी साहित्य में समय की घाट (कमी) के कारण आया है। इसके आरंभ के बारे में भी जुदा-जुदा मत हैं। वयोवृद्ध अग्रणी लघुकथाकार रौशन फूलवी का मत है कि पंजाबी-लघुकथा का इतिहास 500 वर्ष पुराना है। गुरु नानक जन्मसाखी जितना। परंतु, इसके आधुनिक रूप पर बाते करें तो यह विधा पंजाबी साहित्य में पिछले दो-एक दशकों में उभरकर सामने आई है। पंजाबी-लघुकथा के युवा

आलोचक-लेखक मेहताब-उद-दीन के अनुसार आधुनिक लघुकथा का पंजाबी साहित्य में प्रचलन नियमित ढंग से सन् 60 के बाद प्रयोगशील लहर के आने पर हुआ। पंजाबी-लघुकथा के पहले आलोचक डॉ. अमर कोमल का मानना है कि यह सन् 70 के बाद ही अस्तित्त्व में आई है। सुलक्खण मीत और हमदर्दवीर नौशहरवी जैसे चर्चित व अग्रणी पंजाबी-लघुकथा लेखक इसके अस्तित्त्व में आने का सन् 1962 मानते हैं। हिंदी के चर्चित लघुकथाकार और पंजाबी-हिंदी के जाने-माने अनुवादक अशोक भाटिया इसका जन्म सन् 1950 मानते हैं, किंतु उन्हीं का कहना है कि यह सामूहिक आंदोलन के रूप में सन् 1970 में ही उभरी यानी, आधुनिक पंजाबी-लघुकथा का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। कुछेक विद्वान् तो यहाँ तक मानते हैं कि हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में लिखी जा रही लघुकथाओं से प्रेरणा पाकर पंजाबी साहित्य में इसका प्रचलन आरंभ हुआ। इसकी परिभाषा भी सबने अपने-अपने ढंग से अलग-अलग दी है। डॉ. अमर कोमल तो लघुकथा को कहानी का ही रूप स्वीकार करते हैं।

पंजाबी में हमदर्दवीर नौशहरवी, दर्शन मितवा, शरन मक्कड़, सुलक्खण मीत, भूपिंदर सिंह, प्रीतम बराड़ लंडे, रौशन फूलवी, मोहन शर्मा, कर्मवीर सिंह, दलीप सिंह, भूपाल, अमरजीत सिंह, अनवंत कौर, सतवंत कैंथ, रूपिंदर मान, जिंदर, जगदीश अरमानी, डॉ. अमर कोमल, आर. एस. आज़ाद जैसे लेखक हैं जो लघुकथा को गंभीरता से लेते आ रहे हैं और इस विधा में समर्पित भाव से कार्य कर रहे हैं। पंजाबी-लघुकथा को आधुनिक रूप प्रदान करने में इनके योगदान को नाकारा नहीं जा सकता। इनके अलावा, मेहताब-उद-दीन, श्याम सुंदर दीप्ती, कृपाल सिंह डुल्ट, कृपाल कज़ाक, कँवल विद्रोही, बादल बिंदरा, अजीत सैनी, श्याम सुंदर अग्रवाल, सुमेर, मीत खटड़ा, अवतार सिंह दीपक, मोहन सिंह प्रीत, कुलदीप बेदी, दर्शन सिंह आष्ट, महाबीर काल, गुलवीर सिंह भाटिया, हरबंश, निरर्जन बोहा, जोगिंदर सिंह निराला जैसे अनेक लेखक भी पंजाबी-लघुकथा को आगे बढ़ाने में अपना निरंतर योगदान दे रहे हैं। मूलत: कहानीकार और उपन्यासकार रामसरूप अणखी, वरियाम सिंह संधू और गुरमेल मडाहड़ ने भी पंजाबी में लघुकथाएँ लिखी हैं। भले ही कम, पर अच्छी लघुकथाएँ लिखकर इस विधा की अहमियत की स्वीकार है।

पंजाबी-लघुकथा पर समालोचनात्मक कार्य अधिक नहीं हुआ है। सन् 1980 में दैनिक 'नवाँ ज़माना' में प्रकाशित लघुकथाओं पर प्रो० तेजवंत मान की आलोचना मिलती है जो उनकी समालोचना की पुस्तक 'प्रतिकरम' में भी संकलित है। दूसरे, डॉ. अमर कोमल हैं जिनके पंजाबी-लघुकथा पर आलेख 'खोज पत्रिका', 'पंजाबी-दुनिया' तथा पंजाबी की अन्य पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ने को मिल जाते हैं। युवा आलोचक व लेखन मेहताब-उद-दीन की पंजाबी-लघुकथा पर आलोचनात्मक पुस्तक 'पंजाबी-लघुकथा: प्राप्तियाँ और संभावनाएँ' सन् 1988 में आई है जो न केवल लेखक की ही पहली आलोचनात्मक कृति

है बल्कि पंजाबी-लघुकथा पर भी पहली आलोचनात्मक कृति है। इस पुस्तक में पंजाबी-लघुकथा पर विस्तृत रूप में काम किया गया है। पंजाबी-लघुकथा की उत्पत्ति, इतिहास, विकास, शिल्प, कश्य के साथ-साथ इसके आलोचनात्मक अध्ययन के दौरान पंजाबी में अब तक प्रकाशित हुए लगभग सभी लघुकथा संग्रहों की समीक्षा भी की गई है। इस पुस्तक का प्रकाशन निश्चय ही स्वागत योग्य और सराहनीय है।

इधर, सर्वश्री रमेश बत्तरा, अशोक भाटिया, फूलचंद मानव, श्याम सुंदर अग्रवाल, कमलेश भारतीय आदि अनेक हिंदी लेखकों ने श्रेष्ठ पंजाबी-लघुकथा को हिंदी के पाठकों के सम्मुख पहुँचाने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अशोक भाटिया द्वारा तो पंजाबी की लघुकथाओं पर संपादित लघुकथा-संकलन 'पंजाबी की श्रेष्ठ लघुकथाएँ' शीघ्र ही प्रकाशित होकर पाठकों के सामने आने वाला है। आज जब, भारत की अनेक भाषाओं में लघुकथा-लेखन एक आंदोलन के रूप में हो रहा है, तब हम पंजाबी में हो रहे लघुकथा-लेखन पर प्रश्नचिह्न नहीं लगा सकते। पंजाबी में भी लघुकथा-लेखन अब आंदोलन का रूप धारण कर रहा है। पंजाबी-लघुकथा लेखक मंच, पंजाब की स्थापना हमारे इस कथन को बल प्रदान करती है। इस मंच की ओर से पंजाबी-लघुकथा पर वर्ष में तीन-चार समारोह, सेमीनार, गोष्ठियाँ आदि आयोजित करना, लघुकथा लेखकों को सम्मानित करना, लघुकथा के बेहतर लेखन के लिए युवाओं को प्रोत्साहित करना आदि इस बात का द्योतक है कि अब पंजाब में पंजाबी-लघुकथा को लेकर गंभीरता से सोचा जा रहा है। पंजाबी में कोई भी बड़ी पत्रिका जैसे 'नागमणि', 'आरसी', 'लौ', 'प्रीतलड़ी', 'जागृति' आदि पंजाबी-लघुकथा के प्रकाशन से परहेज़ करती हैं। इन पत्रिकाओं को पंजाबी लघुकथाओं के अस्तित्त्व को मान लेना चाहिए और उन्हें प्रकाशित कर इस विधा के विकास में अपना सहयोग देना चाहिए। मात्र दैनिक पत्र जैसे 'पंजाबी ट्रिब्यून', 'अजीत', 'जगवाणी', 'नवाँ ज़माना', 'अकाली पत्रिका' हैं जो पंजाबी लघुकथाओं को प्रकाशित करते हैं। भले ही, फ़िलर के रूप में भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला की मासिक पत्रिका 'जन-साहित' ने वर्ष 1980 में पंजाबी-लघुकथा पर विशेष अंक प्रकाशित कर इतिश्री कर ली है। लघु पत्रिकाओं में 'मंथन', 'कावि गुलज़ार', 'होंद', 'लकीर', 'प्रेरणा', 'अणु' आदि में लघुकथाएँ छपती रही हैं, किंतु अब इनमें से अधिकांश बंद हो चुकी हैं। इस समय 'सतिसागर' (सं. रौशन फूलवी) ऐसी पत्रिका है जो पंजाबी लघुकथाओं को प्रकाशित कर रही है। इसका जनवरी अंक, लघुकथा अंक के रूप में आ रहा है। एक नई, लघुकथा को समर्पित पत्रिका 'मिन्नी' (सं. श्याम सुंदर दीप्ती) का प्रकाशन आरंभ हुआ है जिससे बहुत सी आशाएँ बँधती हैं।

फिर भी, आज पंजाबी-लघुकथा का भविष्य उज्ज्वल दिखने लगा है। इस विधा को सजाने-सँवारने और इसके विकास के लिए लेखकों को विशेषतः नए लेखकों को चाहिए कि वे पंजाबी-लघुकथा के विकास के लिए, अपने परिवेश, वातावरण, समाज के

साथ-साथ देशीय व अंतरराष्ट्रीय समस्याओं, घटनाओं पर भी पैनी नज़र रखते हुए इस ओर उद्यत हो। लतीफ़ेबाज़ी या चुटकुलेबाज़ी से बचते हुए, अछूते और नए विषयों पर कलात्मक अभिव्यक्ति लघुकथा के जरिए प्रदान करें। लघुकथा में सामाजिक चेतना के समावेश की भी आज बेहद ज़रूरत है।

अंत में, बकौल अशोक भाटिया- "पंजाबी-लघुकथा को अपनी वर्तमान स्थिति से ऊपर उठाने के लिए प्रयोगात्मक ख़तरे उठाकर इस साहित्य-प्रकार की गहरी खोज व परख़ करनी होगी। दूसरे, पंजाबी-लघुकथा को अपने केंद्र में हिंदी की 'लघु-आघात' जैसी समर्पित पत्रिका को जन्म देना होगा। तीसरे, दिग्गज समीक्षाकों के कान खुलने की प्रतीक्षा करने की बजाय, लेखकों को फ़िलहाल समालोचना की ज़िम्मेवारी स्वयं भी उठानी होगी ताकि बेहतर रचनाएँ उभरकर सामने आ सकें।" के साथ हम अपनी बात को समाप्त करते हैं।

संपादक

-सर्वश्री अशोक भाटिया, श्याम सुंदर अग्रवाल और गुरमेल मडाहड़ के हम हृदय से आभारी हैं जिन्होंने न केवल पंजाबी-लघुकथा संग्रह उपलब्ध कराए, वरन इस संदर्भ में हमें अन्य रचनात्मक सामग्री जुटाने में भी आगे बढ़कर मदद की। सर्वश्री रमेश बत्तरा, रूपसिंह चंदेल और श्याम सुंदर चौधरी के भी हम कृतज्ञ हैं जिन्होंने इस कि हेतु अपना पूरा-पूरा सहयोग दिया। इसके साथ-साथ, उन सभी रचनाकारों के भी हम धन्यवादी हैं जिन्होंने अपनी रचनाएँ भेजकर इस अंक को पूर्णता प्रदान की।

-इस अंक पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं का हम बेसब्री से इंतज़ार करेंगे। अंत में, प्रयास के सभी पाठकों को नववर्ष की हमारी हार्दिक शुभकामनाएँ!

डॉ. अमर कोमल

जन्म: 29 नवंबर 1933, महल कलां, संगरूर (पंजाब)
शिक्षा: एम.ए., पी.एचडी.
संप्रति: सरकारी रणबीर कॉलेज, संगरूर में पंजाबी के लेक्चरर

सन् 1955 से लेखन-यात्रा आरंभ की। लघुकथाएँ सन् 1978 से लिखनी प्रारंभ की। कहानी, कविता, लघुकथा के अलावा आलोचनात्मक आलेख भी। पंजाबी के पहले लघुकथा-आलोचक। लगभग 150 लघुकथाएँ प्रकाशित। कुछेक रचनाओं का हिंदी और उर्दू में अनुवाद। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी, उर्दू व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:
• कहानी व लघुकथाओं की दो पुस्तकें, • वेदन कहिए किसु (1988) में प्रकाशित।
• चिणगाँ (1983)

"लघुकथा की ख़ूबसूरती उसमें प्रस्तुत सार्थक, सजीव विषयवस्तु में ही निहित है, उसकी कलात्मक प्रस्तुति में ही है, सार्थक विषयवस्तु और सजीव कलात्मक स्वरूप दोनों लघुकथा के लिए ज़रूरी है।"

संपर्क: बी-X11-548, टैगौर स्ट्रीट, कॉलेज रोड, बरनाला, संगरूर (पंजाब)

दो लघुकथाएँ

ब्लैक

मैंने दरवाज़ा खोला। सामने मेरा पड़ोसी नंदू ब्लैकिया. खड़ा था।

उसका मुँह लटका हुआ था। चेहरे पर उदासी और आँख लाल थीं। माथे पर त्यौरियाँ और उसके हाव-भाव देखकर मैं डर ही गया था।

वह रोने जैसी आवाज़ में गिड़गिड़ाता और मिन्नत करता हुआ बोला,

"प्रोफ़ेसर साहब। इसबार अपना बेटा फिर फ़ेल हो गया।"

'अच्छा! बहुत- अफ़सोस हुआ।" मैंने उससे हमदर्दी जताते हुए कहा।

अब, मैंने उसकी उदासी का कारण खोज लिया था। उसका इकलौता बेटा था। 'प्रेप' में तीसरी बार फ़ेल हो गया था

"पर, आप कुछ करो जनाब।" वह जैसे मिन्नत कर रहा था।

"मैं क्या कर सकता हूँ, भाई?"

"जो कुछ कहो। कर दूँगा।"

मैंने 'जो कुछ' का अर्थ समझते हुए फिर कहा, "पर, इसमें हम-तुम कुछ नहीं कर सकते।"

"और कौन कर सकता है?"

"बस, दो ही कर सकते हैं।"

"वह कौन जी?" नंदू ने बेसब्री से पूछा, "बताओ तो सही... अगली बार हम उनको ख़ुश कर देंगे जी।"

"उनमें से पहली- बच्चे की प्रतिभा और बुद्धि है। दूसरा- मेहनत, लगन, और दृढ़-निश्चय।" मैंने जो कुछ कहना था, झटपट कह दिया। पर, नंदू ब्लैकिया मेरी ओर हैरान और उदास होकर कहने लगा, "पर..."

"पर क्या?"

"पर, ये तो हमारे बेटे में है ही नहीं। पैसे जितने कहो, ख़र्च कर देगे।... जिसको कहो, ख़ुश कर देगें।" नंदू ने चापलूसीभरे लहजे में अपनी दलील दी।

"फिर... फिर तो मुश्किल है भई। मेरे द्वारा ब्लैक नहीं चलेगा।"

"अच्छा।... अच्छा आपकी मर्ज़ी है जी। आपकी मर्ज़ी है जी।" कहता-कहता नंदू ब्लैकिया कच्चा-सा होकर "अच्छा।. नमस्ते जी।" कहकर वापस लौट गया।

वह हारे हुए जुआरी की तरह वापस जा रहा था तो मेरी पत्नी ने पूछा कि अपना पड़ोसी नंदू लाल क्या करने आया था:

मैंने उत्तर दिया,

"ब्लैक!"

मेरी पत्नी हैरानी से कभी मेरी ओर, कभी जा रहे नंदू ब्लैकिये की ओर देख रही थी। जैसे, उसे कुछ समझ न आ रहा हो।

लाइसेंस

"निकाल अपना लाइसेंस और स्कूटर के काग़ज़।" ट्रैफ़िक इंस्पेक्टर ने नौजवान से कहा, जिसका स्कूटर उसने अभी-अभी रोका था।

"न तो मेरे पास लाइसेंस है, न ही स्कूटर के काग़ज़।" नौजवान ने बिना किसी झिझक के लापरवाही से जवाब दिया।

"क्यों?"

"बस यूँ ही... ज़रूरत ही नहीं पड़ी कभी।" नौजवान के चेहरे पर न चिंता थी, न ही डर।

"करो जी इसका चालान..." पास खड़े सिपाही ने कहा, "गाड़ी भी तेज़ चला रहा था।"

"तुम मेरा चालान नहीं कर सकते। करके देख लो।"

"क्यों? तू गर्वनर लगा हुआ है?" पास खड़े सिपाही ने नौजवान से पूछा।

"हाँ... आ... गर्वनर तो नहीं, मंत्रीजी का पोता हूँ।"

'पोता' शब्द सुनते ही ट्रैफ़िक इंस्पेक्टर स्वयं कुर्सी से उठा। वह नौजवान के पास आकर बड़े अदब और नरमी से बोला,

"कोई बात नहीं बेटा। तुम जाओ.. हम तुम्हारा लाइसेंस आप ही बनवाकर तुम्हारी कोठी भिजवा देंगे।"

समीप खड़े व्यक्ति जिनके चालान हो चुके थे, या फिर किए जा रहे थे हैरान थे कि मंत्रीजी का पोता होना किस प्रकार का लाइसेंस है, जिससे चालान नहीं होता।

और, नौजवान स्कूटर को आधी की तरह चलाकर अलोप हो गया।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

हिंदी के सुपरिचित लघुकथा लेखक

अशोक भाटिया का निजी लघुकथा संग्रह

मोड़ों से गुजरते हुए

(शीघ्र प्रकाश्य)

इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, नई दिल्ली

कर्मवीर सिंह सूरी

जन्मः 21 जून 1954 अमृतसर (पंजाब)

शिक्षाः एम. ए. (अँग्रेज़ी, पंजाबी)

संप्रतिः रिसर्च असिसटेंट, भाषा विभाग, पंजाब सरकार, पटियाला।

सन् 1971 से कहानी-लघुकथा लेखन आरंभ। अब तक लगभग 60 लघुकथाएँ पंजाबी के पत्रों में प्रकाशित। कुछेक का हिंदी में अनुवाद प्रकाशित। पंजाबी के अलावा हिंदी व अंग्रजी भाषा का ज्ञान।

कृतियाँ:

- पलंग निवारी (कहानी संग्रह)
- छोटी बातें, बड़ी बातें (कविता-संग्रह)
- अन्नदाता (कहानी संग्रह)

"पंजाबी-लघुकथा का भविष्य उज्ज्वल है, बस, इतना ही।"

संपर्कः मकान नं० 28, कैस्थेन स्ट्रीट, तोपखाना रोड, पटियाला-147001 (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

अन्नदाता

एक कॉलेज प्रिंसीपल की कोठी। कोठी के साथ काफ़ी लंबी-चौड़ी जमीन, इसमें मौसम अनुसार वह बुवाई करवाता है। कभी गेहूँ, कभी चने आदि। कॉलेज के लॉन के लिए एक माली लगा है। उससे वह घर के सारे काम करवाता है। मरियल-सा भैया है वह। ज़रदा खाकर काम करता रहता। स्वभाव से वह गऊ है। इसबार धान की फ़सल माली की मेहनत के सदके काफ़ी अच्छी निकल आई है। उसने दाने भी अपनी लुगाई को साथ लगाकर निकाल दिए हैं। दाने देखकर प्रिंसीपल और उसकी बीवी कह रहे थे जितनी फ़सल होनी चाहिए थी, उतनी हुई नहीं। वे दोनों बहुत कम ही ख़ुश हुआ करते हैं, क्योंकि उनके घर कोई 'फ़सल' पैदा नहीं हुई।

...आज माली थैला उठाए बाज़ार से घर को आ रहा है। उसके एक साथी ने रास्ते में पूछ लिया,

"का ला रहे हो?"

"चावल।"

"तुहार मालिक कुछ नहीं देत?... इतना दाना होइत है।"
माली चुप है। पर उसकी आँखें बोल रही हैं।

(पंजाबी से अनुवाद : अशोक भाटिया)

भूख

अप्रैल का महीना है। मेरे कमरे में एक चिड़ा और चिड़िया तिनका-तिनका जोड़कर घोंसला बना रहे हैं। तिनके फ़र्श पर गिरते हैं... चारपाई पर गिरते हैं। बड़ी खुंदक आती है, जब बार-बार यही कुछ होता रहता है। मैं अधूरा घोंसला तोड़ने लगता हूँ। फिर विचार आता है, क्यों किसी का घर उजाड़ूँ... अगर मैं अपना नहीं बना पाया। इनकी छोटी-छोटी हरकतें देखने को मिलेंगी। उनमें काफ़ी प्रेम भी लगता है।

शायद अंडे देने की ऋतु है। इसीलिए बेसबरी के साथ जंगी-पैमाने पर काम चालू है। यह चिड़िया किसी दूसरी चिड़िया को अपने चिड़े के समीप फटकने भी नहीं देती। बाक़ायदा जंग करती है। मैं उनकी हरकते देखने के लिए उत्सुक हूँ।

गर्मी बहुत है। दोपहर को पंखा फुल-स्पीड पर छोड़कर मैं सो गया। शाम को जब आँख खुली तो देखा, वही चिड़िया फ़र्श पर मरी पड़ी है, पंखे से टकराने के कारण। मन एक बार बुरी तरह हिल गया। लगा कि सपना देख रहा हूँ। चिड़ा उड़ गया और सारा दिन न आया। रात को मैंने देखा कि वह एक अन्य चिड़िया ले आया है और अपना अधूरा घर जल्दी-जल्दी पूरा कर रहा है। चिड़िया वहीं कोने में मरी पड़ी है।

स्वैटर

दिसंबर का महीना चल रहा है। काफ़ी ठंड है। उस बैंक-मैनेजर ने अपने चपड़ासी को बिना स्वेटर पहने आता देखा तो उसको बड़ी दया आई। उसने मन-ही-मन सोचा कि अपना एक पुराना स्वेटर उसे दे देना चाहिए जो उसकी ढलती उम्र के कारण ढीला पड़ गया था। वैसे, वह पहले भी कभी-कभार उसे पुराने कपड़े देता रहता था। उसने उसे घर आकर स्वैटर ले जाने को कहा। मैनेजर दो महीने बाद रिटायर होने वाला था। जब वह दो-तीन दिन तक लेने न आया तो उसने हारकर एक बार फिर से कहा। उसने अपनी पत्नी को भी कह रखा था कि स्वेटर उसी को देना है, कहीं बर्तन बेचने वालों को न दे देना। इसी तरह एक महीना गुज़र गया पर वह लेने नहीं आया। उसे चपड़ासी पर अब ग़ुस्सा आ रहा था पर पहले की तरह रोब से भी नहीं कहना चाहता था। शायद, कह भी नहीं सकता था। उसे मालूम था कि छिपते सूर्य को कोई सलाम नहीं करता। साथ ही, जाते वक़्त कोई बद-मगजी पैदा हो जाने के डर से वह चुप ही रहा। लेकिन, कशमकश उसके अंदर चलती रही।

पहली तारीख़ को उसने देखा कि चपड़ासी एक नया रैडीमेड स्वैटर पहने उसके सामने तनकर खड़ा है, जो उसपर काफ़ी खिल भी रहा है।

गुरमेल मडाहड़

जन्म: 1 जुलाई 1945, बडरुक्खा, ज़िला संगरूर (पंजाब)

शिक्षा: एम. ए.

संप्रति: सरकारी नौकरी

मूलत: कहानीकार व उपन्यासकार। इसके अतिरिक्त लघुकथा, यात्रा-वृतान्त, शब्दचित्र आदि विधाओं में भी क़लम चलाई। कई कहानियों-लघुकथाओं का हिंदी में अनुवाद प्रकाशित।

कृतियाँ:

- अणगौले आदमी (1974): कहानी संग्रह
- जागते लोग (1976): कहानी संग्रह
- कच्चे कोठों के वासी (1978): कहानी संग्रह
- जंग जारी है (1981): कहानी संग्रह
- धरती लहुलूहान (1985): कहानी संग्रह
- हम हारे नहीं (1986): कहानी संग्रह
- गुज़ारा: उपन्यास
- समय-समय की बातें: उपन्यास
- अपने घर मेहमान (1982): यात्रा वृत्तांत
- बेनक़ाब चेहरे (प्रकाश्य): शब्द-चित्र

संपर्क: बी-4/91, अस्तबल, पटियाला गेट, संगरूर -148001 (पंजाब)

दो लघुकथाएँ

स्वागत

कहानी दरबार शुरू हो चुका था। मंच संचालक एक-एक कहानीकार को कहानी पढ़ने के लिए बुलाता और उसके विषय में संक्षिप्त में जानकारी साथ-साथ देता जाता। जब वह एक गजेटिड अफ़सर कहानी पढ़ने स्टेज पर गया तो उसके बारे में मंच संचालक ने धुआंधार भाषण दिया और उसके स्वागत में पहले प्रबंधकों की ओर से इतनी ज़ोर से तालियाँ बजवाई गई कि देखादेखी दर्शकों ने भी तालियाँ बजा दीं। पर, जब वह कहानी पढ़कर मंच से उतर रहा था तो सिवाय प्रबंधकों के किसी दर्शक ने ताली नहीं बजाई।

उसके बाद, एक और कहानीकार की बारी आई जिसके बारे में मंच संचालक ने

कोई ख़ास परिचय नहीं दिया क्योंकि वह एक कहानीकार के सिवाय और कुछ नहीं था। सिर्फ़ कहानीकार का मंच-संचालक क्या परिचय देता। मंच पर चढ़ने के समय किसी ने कोई ताली नहीं बजाई लेकिन जब वह कहानी पढ़कर मंच से उतर रहा था तो पंडाल तालियों के शोर से गूँज रहा था।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

रोशनी

चारों ओर अंधकार छाया था लेकिन एक बिजली का बल्ब जल रहा था जिसके गिर्द पतंगे चक्कर काट रहे थे।

वे बल्ब को छूते और तुरंत जल जाते, झड़कर राख हो जाते, धरती पर आ गिरते।

एक जुगनूँ उनके पास से जाता हुआ रुक गया।

"यह क्या कर रहे हो?" जुगनूँ का सवाल था।

"अँधेरे कोठों के लिए रोशनी जमा कर रहे हैं।" पतंगों का उत्तर था।

"लेकिन, तुम तो रोशनी पाने से पहले ही मरते जा रहे हो। कोठों को रोशनी कैसे दोगे?"

"क़ुर्बानी तो देनी ही पड़ती है।

"समय और स्थान देखकर... यूँ ही जान गँवाने का क्या लाभ?"

जुगनूँ और पतंगों के बीच बहस अभी चल ही रही थी कि बत्ती चली गई।

"अब रोशनी कहाँ से लोगे?" जुगनूँ ने फिर प्रश्न किया।

पतंगे चुप रहे।

"आओ, तुम्हें रोशनी दिखाऊँ।" जुगनूँ ने अपने भीतर से रोशनी की किरण फेंकते हुए कहा।

पतंगे तभी उसकी ओर दौड़े। जुगनूँ आगे-ही-आगे चलता गया। पतंगे उसके पीछे-पीछे जा रहे थे।

"और कहा जाओगे?" पतंगे थककर चूर हो चुके थे।

"सामने देखो..."

पतंगों ने नज़र उठाकर देखा, चढ़ते सूरज की लालिमा पतंगों के कोठों पर पसर रही थी। लेकिन, जुगनूँ ग़ायब हो गया था।

(पंजाबी से अनुवादः फूलचंद मानव)

जगदीश अरमानी

जन्मः 10 नवंबर 1936, होती मरदान
शिक्षाः एम.ए. बी. टी.
संप्रतिः अध्यापन

सन् 1957-58 से कहानी, लघुकथाएँ लिख रहे हैं। लगभग सौ लघुकथाएँ पंजाबी की छोटी-बड़ी पत्रिकाओं में अब तक प्रकाशित। रचनाओं का हिंदी और अँग्रेज़ी में अनुवाद प्रकाशिता पंजाबी के अलावा हिंदी, अँग्रेज़ी व उर्दू भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- धुआँ ते बद्दल (1967)- कथा संग्रह
- भविक्ख दे नक्श (संपादित-1982) कहानी संग्रह
- धुंध ते रोशनी (1985)- कहानी संग्रह
- प्रतिबिंब (1988)- कहानी संग्रह
- बर्फ़ दे आदमी (1988)- हास्य-व्यंग्य

"पंजाबी में लघुकथाएँ बहुत पहले भी लिखी जाती थीं। परंतु, चूँकि पंजाबी के बड़े और स्थापित पत्र इसको छापते नहीं थे, और न ही स्थापित लेखक-आलोचक दोनों ने इसपर ध्यान दिया था, इसीलिए यह विकसित नहीं हो पाई। सन् 1970 के बाद लघुकथा संग्रहों का छपना और नौजवान पीढ़ी द्वारा इस ओर ईमानदारी से जुटना दर्शाता है कि पंजाबी-लघुकथा का भविष्य उज्ज्वल और संभावनापूर्ण है।"

संपर्कः 83/7, मीर कुंदला, पटियाला (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

चाकू

शहर की हवा बड़ी ख़राब थी। इतनी ख़राब कि किसी भी वक़्त कोई भी घटना घट सकती थी। आगजनी, ख़ून-खराबे और लूटमार की घटनाएँ आम घटती थीं। वह जब भी घर से निकलता, उसकी पत्नी उसके घर लौट की सौ-सौ मन्नतें मानती। जब तक वह घर न लौट आता, उसकी पत्नी को चैन न पड़ता। उसका एक पैर घर के भीतर और दूसरा बाहर होता। वह भी अब घर से बाहर निकलते हुए अपनी जेब में कमानीदार चाकू

रखता और सोचता- अगर मेरे क़ाबू कोई बुरा आदमी आ गया तो एक बार तो उसकी आँतें निकालकर रख दूँगा। वह सोचता-सोचता जा रहा था कि अचानक बाज़ार के एक मोड़ आने पर उसका स्कूटर 'किर-किच' करता सड़क पर फिसल गया। दूसरे संप्रदाय के दो अधखड़ उमर के दो आदमी उसकी तरफ़ दौड़े-दौड़े आए। वह डर गया। पर हिम्मत करके फौरन उठा। शरीर पर कई जगह आई खरोंचों की परवाह किए बिना उसने तेज़ी से अपना हाथ अपनी जेब में डाला। पर, वहाँ कुछ नहीं था।

"बेटा, चोट तो नहीं लगी?" एक ने उससे पूछा।

"नहीं।" उसने धीरे-से कहा और स्कूटर को खड़ा करके स्टार्ट करने लगा।

"बेटा, तेरा चाकू।" दूसरे आदमी ने कुछ दूरी पर उसका गिरा चाकू उठाकर उसे पकड़ाते हुए कहा।

उसने एक नज़र दोनों आदमियों की तरफ़ देखा और नज़रें झुकाकर चाकू पकड़ लिया और तेज़ी से स्कूटर स्टार्ट करके चला गया।

आधा आदमी

"तुम्हें यहा नौकरी मिल सकती है।"

"सच। वाह-वाह। बहुत-बहुत धन्यवाद।"

"परंतु एक शर्त पर।"

"बताएँ, शीघ्र बताएँ कौन-सी।"

"तुम्हें तनख्वाह आधी मिलेगी।

"हैं!!... क्यों?"

"तुम्हारा एक हाथ और एक पाँव नहीं है। काम तो तुम आधे आदमी जितना ही करोगे। बोलो, स्वीकार है?"

"एक शर्त पर।"

"वह कैसी?"

"पहले कृपया आप मेरा आधा पेट काट दें।"

प्लॉट

सुबह का वक़्त था। ठंडी हवा चल रही थी। से बहुत दूर चला गया था। बारिश हो चुकने के बाद ठंडी- लेखक अपने विचारों में लीन, बस्ती वह अपनी नई कहानी के लिए प्लॉट सोचने में गहरा उतर गया लगता था। अचानक, उसके चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गई। उसने बाएँ हाथ से चुटकी बंजाकर कहा - "आहा। प्लॉट मिल गया।"

थोड़ी दूरी पर जा रही बैलगाड़ी का एक पहिया कीचड़ में धँस गया था। औरत-मर्द दोनों गाड़ी से उतरकर उसे आगे खिसकाने के लिए अपनी तरफ़ से ऐड़ी-चोटी का ज़ोर

लगा रहे थे, लेकिन बैलगाड़ी जैसे कीचड़ में और नीचे धँसती जा रही थी। मर्द ने एक ठंडी साँस ली और किसी भले आदमी की जात को ढूँढ़ने के लिए इधर-उधर देखा। उसे टीले पर खड़ा लेखक दिखाई दिया। उसकी साँस-मेंसाँस आ गई। लेकिन, लेखक से उसकी नज़रें मिलते ही लेखक ने उसे 'हल्लाशेरी' दी, और कहा,

"शाबाश, जवाना शाबाश! मैं तेरी कहानी लिखूँगा।"

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

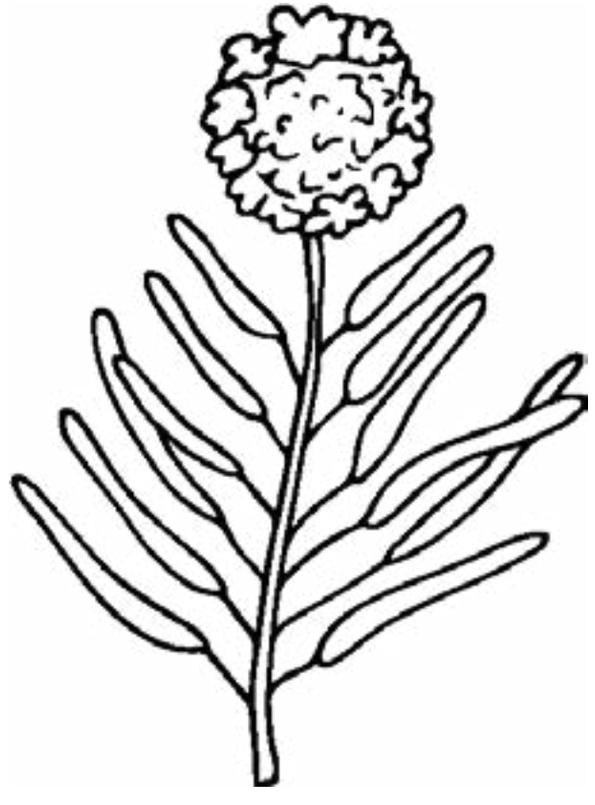

दर्शन मितवा

जन्म: 5 अप्रैल, 1953, मानसा, ज़िला भटिंडा (पंजाब)
शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी)
संप्रति: स्वतंत्र लेखन व पत्रकारिता

लेखन यात्रा सन् 1973 से लेकिन लघुकथाएँ सन् 1978 से लिखनी प्रारंभ कीं। कहानी, उपन्यास, नाटक में भी क़लम चलाई। कई कहानियों-लघुकथाओं का हिंदी व उर्दू में अनुवाद प्रकाशित। पंजाबी के अतिरिक्त, हिंदी, उर्दू और अँग्रेज़ी भाषाओं का भी ज्ञान।

कृतियाँ:

- छिलकों का घोड़ा (1985) - कहानी संग्रह
- बर्फ़ का आदमी (1985) - कहानी संग्रह
- दस गिट्ठ धरती (1987) - कहानी संग्रह
- संविधान रोंदा है (1984) - लघुकथा संग्रह
- नंगे सिर वाली औरत (1983) - उपन्यास
- एक रात का ज़ख़्म (1983) - उपन्यास
- चुप रात का सिवा (1988) - उपन्यास
- इधर-उधर कहाँ तक (1982) - एकांकी
- कथा एक मृत की (1987) - एकांकी
- जनाब हम हाज़िर हैं (1988) - नाटक
- इश्क़ अल्लाह की जात (1988) - नाटक

"लघुकथा अन्य भाषाओं में एक गंभीर विधा है जबकि पंजाबी में इसे ज़्यादातर लतीफ़ेबाजी से आगे नहीं बढ़ने दिया। दरअसल, लघुकथा किसी सहज-स्वभाव चले आ रहे व्यक्ति के चुटकी भरकर उसे सजग करने वाली साहित्यिक विधा है। अब, पंजाबी में भी कथाकार लघुकथा के संबंध में सजग होकर काम करने लगे हैं।"

संपर्क: सिनेमा रोड, मानसा -151058 (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

औरत और मोमबत्ती

"अच्छा तो इधर आ वह औरत को घर के अंदर वाले कमरे में ले गया।

"देख, यहाँ कितना अँधेरा है... और जब मुझे उजाले की ज़रूरत पड़ती है... "उसने जेब से दियासलाई निकाली और सामने कार्निश पर लगी मोमबत्ती जला दी।

कमरे में उजाला बिखर गया।

"देख, जब तक मुझे उजाला चाहिए... यह जलती रहेगी।"

वह औरत उसकी ओर देखती रही।

"जब मुझे इसकी ज़रूरत नहीं होगी तो..."कहते ही उसने मोमबत्ती को फूँक मार दी।

कमरे में अँधेरा पसर गया।

उस औरत ने उसके हाथ से दियासलाई की डिबिया ली और सामने कार्निश पर लगी मोमबत्ती फिर से जला दी।

आदमी उसकी ओर देख रहा था।

"पर, औरत कभी मोमबत्ती नहीं होती।" उस औरत के होंठ हिले, "जिसे जब जी चाहा जला लो और जब जी चाहा बुझा दो..." दोनों की नज़रें मिलीं। "समझे?... और, मैं एक औरत हूँ, मोमबत्ती नहीं।

अब आदमी चुप था।

औरत के चेहरे पर अनोखा जलाल था।

और, अब मोमबत्ती जल रही थी।

फाँसी पर टँगे गीत

पहले वह स्वयं चाहे रोता या हँसता होता, पर उसके गीत हँसते पर, अब वह आप हँसता है लेकिन उसके गीत हरवक्त रोते ही रहते हैं। लोग कहते हैं कि वह मरे हुए गीत लिखता है।

"मैं मरे हुए गीत क्यों लिखता हूँ?"

वह हर समय यही सोचता सोचता अपनी कोठी के अंदर झाँकता रहता है। उसे लगता है, जैसे हवेली के हर कोने में उसका हर गीत गले में रस्सा बाँधे अपने आपको फाँसी लगा रहा है। वह रो पड़ता है।फिर उसका ध्यान बाहर खड़े छोटे-छोटे बच्चों की ओर जाता है। जिनके बदन पर फटे चीथड़े, हाथों में और पेट में भूख अपने नाख़ून मार रही है। वे बच्चे कुछ गा रहे हैं।

"इन कोठियों और हवेलियों की आबोहवा तेरे गीतों के माफ़िक नहीं गीतकार। इसलिए तेरे गीत पैदा होते ही मर जाते हैं... अगर, तू चाहता है, तेरे गीत हमें, तेरे गीत खेले-कूदें तो तू फिर से अपनी पहली दुनिया में आ जा। तेरे गीत फिर से हँसने लगेंगे।"

गीतकार को लगा, जैसे वे बच्चे उसे ही गा-गाकर कह रहे हों।

वह उसी वक़्त अपनी कोठी की सीढ़ियाँ उतरकर शहर से बाहर बहते गंदे नाले पर झुग्गियाँ डाले बैठे लोगों की ओर हो लिया।

कलाकार

सड़क के किनारे मीठी और सोज़भरी आवाज़ में कोई अंधा गा रहा है। उसके इर्दगिर्द इकटठा हुई भीड़ है। मैं भी भीड़ में हूँ। इक्टठा हुए लोग अंधे की तारीफ़ कर रहे हैं,

"देख, कितना अच्छा गाता है..."

"पर बेचारा अंधा है।... कितनी मीठी और दर्दभरी आवाज़ है ... बोल कलेजे को छूते चले जाते हैं।"

"यह भाई हिंदुस्तान है, और हिंदुस्तान तो है ही कलाकारों का घर..." मैं बेवजह ही अपनी छाती फुलाता हूँ।

"बाबूजी, एक पंजी... भगवान तुम्हारा भला करे। तुम्हारे बच्चे जिएँ।" अंधा सभी के सामने हाथ फैलाता है।

मुझे जैसे अपना और अपने हिंदुस्तान का मान कम होता हुआ लगता है। अंधे को बढ़िया कलाकार कहने वाले सारे बंदे भीड़ में से एक-एक करके खिसक गए हैं।

"अबे ओ अंधे!... तूने आज फिर यहाँ भीड़ जमा कर ली.. तुझे कितनी बार कहा है, यहा चौक में मजमा न लगाया कर। फिर भी तू मजमा सजाके बैठ जाता है... ऐसे तो तू नहीं मानता।" डंडा घुमाते हुए आए सिपाही ने उसे धौल जमा दी है।

बूढ़ा शरीर धक्का खाकर नाली के किनारे जा गिरता है। हाथ में इक्ट्ठा हुए पैसे नाली में जा गिरते हैं।

"साले को कितनी बार कहा है, पर ऐसे कहा अक्ल आती है। जब तक थाने ले जाके चूतड़ न सेकें।"

एक-एक करके सभी लोग खिसक गए हैं।

'यह तो भाई हिंदुस्तान है... और हिंदुस्तान तो है ही कलाकारों का घर...' अपने कहे शब्द सोचकर मुझे लगता है, जैसे मेरी छाती रीढ़ की हड्डी से जा मिली हो।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

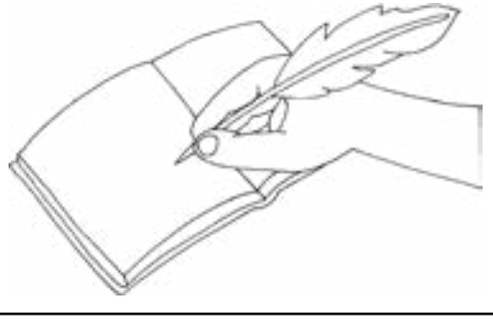

दलीप सिंह भूपाल

जन्मः 8 अगस्त 1936, गाँव चूहड़ चक्क, ज़िला-फरीदकोट (पंजाब)
शिक्षाः एम.ए. (पंजाबी), बी.टी.
संप्रतिः गवर्नमेंट हाई स्कूल, रोली, फरीदकोट में मुख्य अध्यापक

सन् 1954 से लिखना आरंभ किया। लघुकथाएँ सन् 1970 से शुरू की। लघुकथाओं के साथ-साथ, आलोचना, हास्य- व्यंग्य तथा निबंध लेखन भी। अब तक लगभग 35 लघुकथाएँ प्रकाशित। कुछेक हिंदी में अनूदित। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी, उर्दू और अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- ग्रहणे सूरज (लघुकथा संग्रह) 1973
- चुस्कियाँ (हास्य-व्यंग्य) 1976
- कागज़ी पहलवान (हास्य-व्यंग्य) 1988

"एक सफल लघुकथा न कहानी का सार होती है, न चुटकुला, साहित्यिक अख़बार और न ही लापरवाही से सुनाया गया टोटका। ये तो जीवन की किसी क्षणभंगुरी घटना को कम-से-कम शब्दों में दर्शाती है, कुछ प्रश्न उठाती है और कभी-कभी समस्याओं के हल निकालती हुई बिल्कुल नवीन साहित्यिक विधा है।"

संपर्कः 636, सिविल लाईंस, मोगा (पंजाब)

दो लघुकथाएँ

फ़ुर्सत

लेखक ने बहुत उत्साह से अपनी नई छपी पुस्तक एक स्कूल के प्रिंसीपल को भेंट करते हुए कहा,

"यह मेरी दो वर्षों की मेहनत है जी...।"

प्रिंसीपल ने पुस्तक को उत्सुकता से उल्टा-पुलटा कर सरसरी तौर पर उसके दो-चार पन्ने उलटाए।

"तुम लोगों को इतने बड़े ग्रंथ लिखने का समय पता नहीं कैसे मिल जाता है। हमें तो पढ़ने की भी पुत नहीं मिलती।'

लेखक तुरंत दफ़्तर से बाहर आ गया। उसे प्रिंसीपल की घंटी की ट्रिन... ट्रिन सुनाई दे रही थी। चपरासी से चाय मंगवाने के लिए प्रिंसीपल से घंटी बजाई थी क्योंकि हर पीरियड में उसे गरम चाय का प्याला पीने की आदत थी।

पीने और पढ़ने की आदत में बहुत फ़र्क़ है, मैं सोच रहा था।

समझ नहीं आता

उस बदसूरत, भैंगे व काले-कलूटे ड्राइवर ने अपने पुराने मॉडल के खड़खड़ करते ट्रक के माथे पर ये शब्द क्यों लिखवाए हुए हैं:

"बुरी नज़र वाले तेरा मुँह काला।"

(पंजाबी से अनुवादः श्याम सुंदर अग्रवाल)

पांधी ननकाणवी

जन्मः अप्रैल, 1930, गाह, ज़िला जेहलम (पाकिस्तान)

शिक्षाः बी.ए. ज्ञानी

संप्रतिः स्वतंत्र लेखन

सन् 1955 से लेखन शुरू। लघुकथाएँ सन् 1968 से आरंभ। नाटक, कहानी, एकाकी, उपन्यास भी लिखे। अब तक लगभग 70 लघुकथाएँ प्रकाशित। कुछेक रचनाओं का पंजाबी के अलावा, हिंदी में अनुवाद प्रकाशित। हिंदी, उर्दू व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँः नाटक, एकाकी, उपन्यास, कहानी की अनेक पुस्तकें। एक लघुकथा संग्रह 'निमोलियाँ' शीघ्र प्रकाश्य।

"बहुत से नए लेखक पंजाबी में लघुकथा लिख रहे हैं। इसका भविष्य उज्ज्वल है। लघुकथा में व्यंग्य का होना अति आवश्यक है।"

संपर्कः जे-8:122, राजौरी गार्डन नई दिल्ली-27

तीन लघुकथाएँ

गिफ़्ट

बलजीत ने सोचा कि अगर नीटू की स्कूल-ड्रेस नक़द ख़रीद ली तो आख़िरी हफ़्ता होने की वजह से घर का ख़र्चा चलाना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए वह सीधी अपने जीजाजी की दुकान पर चली गई जो रैडीमेड ड्रेसों का काम करते थे। दुकान पर पहुँची तो पता चला कि जीजाजी कहीं गए हुए हैं और उसकी बहन काउंटर पर खड़ी है। दोनों बहनें जब इधर-उधर की रस्मी बातें कर चुकीं तो बलजीत ने नीटू के लिए स्कूल-ड्रेस की माँग की। ड्रैस नीटू को ठीक आ गई आ गई थी बलजीत ने कहा, "बहन इसके पैसे मैं पहली तारीख़ में जाऊँगी."

"क्यों? भई ये बात नहीं चलेगी।" मनजीत ने नाक-भौं सिकोड़कर कहा।

बड़ी बहन की यह बेरुख़ी देखकर उसका रंग फीका पड़ गया। उसने गले की थूक

निगलते हुए कहा, “बहन, आगे कभी तेरा पैसा रखा है? हफ़्ते की ही तो सारी बात है।”

“लेकिन, तेरे जीजाजी ने मना कर रखा है कि सगे-संबंधी ही क्यों न हो, पर उधार नहीं देना। चल तू अस्सी नहीं तो चालीस ही दे दे, बाक़ी फिर दे देना।”

“पर बहन जो पैसे होते तो सारे ही न दें जाती मैंने तो आगे भी देने हैं, पीछे भी।”

बलजीत का मन उखड़-सा गया था। ड्रैस लेकर जब वह घर पहुँची तो पड़ोसन ने पूछा, “बहन, कितने की लाई है?”

“अस्सी रुपये की।”

“कपड़ा तो अच्छा है... किस दुकान से ली है?”

“अपने जीजाजी की दुकान से।”

“अच्छा... फिर तो तुझे गिफ़्ट में मिल गई होगी। तेरी तो मौज बन गई।”

“हाँ बहन...” कहते-कहते बलजीत की आँखों से दो आँसू निकलकर ड्रैस पर आ गिरे।

न्याय

मनसासिंह कई दिनों से पुलिस चौकी के चक्कर लगा रहा था। कभी थानेदार न होता और कभी कोठी वाला सरदार न पहुँचा होता। सरदार की कोठी का डिस्टेंपर करने का ठेका उसने दो महीने पहले लिया था पर, सरदार था कि पैसे देने का नाम ही नहीं लेता था। आख़िर, एक दिन तीनों संयोगवश चौकी में इकट्ठे हो ही गए। थानेदार ने सरदार से पूछा, “क्या बात है. सरदार जी। आपने पैसे क्यों नहीं दिए इस ग़रीब के?”

“ऐ जी... पैसे किस बात के दें? इसने काम हमारी मर्ज़ी के मुताबिक़ नहीं किया।”

“बताइए न महाराज, कौन-सा काम नहीं किया? मैंने कोठी चमकाकर रख दी है। तो भी कहते हैं...” मनसा सिंह बोल उठा।

“जी, रंग निखरा ही नहीं। हम पैसे किस बात के दें?”

“देखिए, यह ज़्यादती हैं। यह ग़रीबमार अच्छी नहीं। यह चौकी है। यहाँ ऐसी शिकायतें आती रहती हैं कि काम करा लिया जाता है, पैसे नहीं दिए जाते।” थानेदार ने सोच-सोचकर अपना फ़ैसला सुना दिया।

“जनाब। आप कहते हैं तो पैसे दे देते हैं। लेकिन काम हमारी मर्ज़ी के मुताबिक़ नहीं हुआ है।” सरदार जी ने भी रोज़-रोज़ के झगड़े को ख़त्म करने में ही ख़ैरियत समझी।

“सुना भाई, कितने का ठेका था?”

“पाँच सौ का जी”

“दीजिए... साढ़े चार सौ।”

और बिना कुछ बोले सरदार ने साढ़े चार सौ के नोट मनसा सिंह के हाथ में थमाए और लिखा-पढ़ी करवाने के बाद चौकी से बाहर आ गया।

मनसासिंह कह रहा था, “हुज़ूर ने बड़ी समझदारी से पैसे निकलवाए है। हुज़ूर के

इनसाफ़ की धूम पहले भी मैं सुन चुका था। मुझे कोई सेवा हो तो बताइए।”

“अरे नहीं भाई। मैंने रिश्वत कभी नहीं ली। मैंने रिश्वत कभी नहीं ली। मैंने तो इनसानियत के नाते तुम्हारा काम किया है। यों यार, मेरे कमरों में भी सफ़ेदी की ज़रूरत हैं। अगर, एक-आध दिन मेरे घर लगा सको... बस दो कमरे हैं छोटे-से, एक बरामदा है... रसोई, गुसलख़ाना तो हैं ही ... यही बस थोड़ा-बहुत डिस्टेंपर-सा...”

“जी... जी...” बड़ी मुश्किल से मनसा सिंह के मुख से निकला।

“बैठ यार। पता बताता हूँ अपना। तुम समझदार आदमी हो।... ज़रा अच्छे चमक जाएँगे कमरे।”

और, मनसासिंह को थूक निगलनी मुश्किल हो रही थी।

मानस-जनम

रातभर झुग्गियों वाले आँधी-बरसात से जूझते रहे थे। लेकिन, कोई फ़ायदा नहीं हुआ था। कई झुग्गियों के छप्पर ही उड़ गए थे। तमाम झुग्गियों में कमर-जितनी बरसात भर गई थी। आख़िर, उन्होंने अपने बच्चों को सँभाला और भीगते हुए इधर-उधर सिर छिपाने को दौड़े। रातभर वे कोठियों की दीवारों और छज्जों के नीचे पड़े ऊँघते रहे। सुबह हुई तो लाउड-स्पीकर से यह आवाज़ उनके कानों में गूँजी,

“मानस-जनम दुर्लभ है, यह बार-बार हाथ नहीं आता।”

यह सुनकर बारू के कान बजने लगे, दिल ने झटका-सा महसूस किया। वह ऊँचा-सा बोला,

“ऐसे मानस-जनम के बिना कमी ही क्या थी दुनिया में... जो हम जीते हैं।”

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

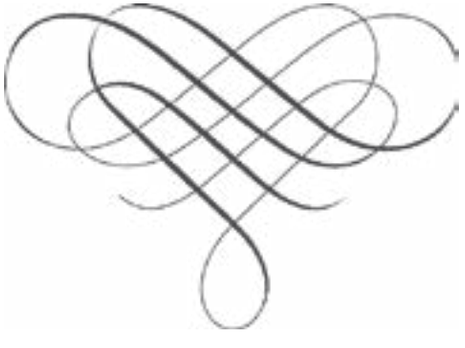

प्रीतम बराड़ लंडे

जन्म: 15 अगस्त 1940, गाँव लंडे (पंजाब)
शिक्षा: डिप्लोमा इन फ़ाइन आर्ट्स
संप्रति: सरकारी नौकरी

सन् 1957 से लेखन-यात्रा आरंभ। लघुकथा सन् 1970 से शुरू की। अब तक 150 से अधिक लघुकथाएँ प्रकाशित तथा हिंदी में अनूदित। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान

कृतियाँ:

• मौसम (1967) • आ चाँद पकड़ें (1984), • गौतम बोलना नहीं (1985)

"पंजाबी-लघुकथा की उम्र बहुत कम है लेकिन, फिर भी, बहुत सी पंजाबी लघुकथाएँ ऐसी हैं जिसकी तुलना हम विदेशी लघुकथाओं से कर सकते हैं। कम शब्दों में बहुत बड़ी बात कह डालना लघुकथा की ख़ासियत होती है। लोगों के जीने का ढंग इतना बदल गया है कि अब वे उपन्यास और लंबी कहानी पढ़ने से लघुकथा पढ़ना ज़्यादा पसंद करते हैं।"

संपर्क: 586, सिविल लाइन्स, मोगा (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

ग़रीबमार

मैले-कुचैले कपड़े, फैली हुई जट्टों वाली पगड़ी। वह काम कराने के लिए रोज़ शहर के दफ़्तर आता और लौट जाता था। काम कभी नहीं बना था, न ही उम्मीद थी। जब वह चक्कर काट-काटकर थक गया तो एक तरीक़ा सूझा। उसने बाबू को बीस का नोट पकड़ाकर उसने कहा,

"ले बाबू, चाय पी लेना। काम की कोई बात नहीं। कोई जब मौक़ा लगे कर देना, ऐसी क्या जल्दी है।

ऐनक के ऊपर से चूहे-सा देखता बाबू 'ही-ही' करता हुआ बोला, "रंडी चाय... ही-ही, एकदम रंडी।"

जट्ट ने उदास फ़सल जैसा साँस भरकर कहा, "नहीं बाबू। रंडी क्यों, हद हो गई है।" उसने बीस का एक और नोट निकालकर बाबू की मेज़ पर रख दिया। बाबू ने हैरान नज़रों से करने के मुँह की तरफ़ देखा, फिर दोनों शरीफ़-से नोट अपनी पैंट की चोर-जेब में ठूँस लिए। अब उसके हाथ बड़ी फुर्ती से फ़ाइलें उलट-पलट करने लगे, जैसे बरसों का काम वह आज ही कर डालेगा।

मिनटों में काग़ज़ तैयार करके बाबू ने करमे के हाथ में पकड़ा दिए, "लो सरदार जी, तुम भी क्या याद करोगे। बड़ी माथापच्ची करनी पड़ी है। थक गया हूँ।"

करमे ने काग़ज़ ज़मीन पर फेंककर बाबू को कॉलर से पकड़कर ललकारा,

"बाबू, तुझे पता है, सर्दियों की कड़कदार रातों में गेहू को पानी कैसे दिया जाता है? डीजल की कमी पड़ने पर काम छोड़कर लाइन में किस तरह नंगे पाँव..." कापते हाथों से बाबू ने जेब से पैसे निकालकर करमे की जेब में डाल दिए,

"जाने दो सरदार जी, क्यों ग़रीब-मार करते हो।"

'हुँह। ग़रीब मार।' और वह रुपये पगड़ी के नीचे सँभालता दफ़्तर से बाहर निकल गया। शायद गाँव को जाती आख़िरी बस मिल ही जाए।

आदत

सेवा मुक्त होने के बाद घर में आज उसका पहला दिन था। वह एक अजीब-से अचम्भे में था, बिना काम के आदमी भला किस तरह रह सकता है। खाली आदमी तो सुना है, बूढ़ा भी बहुत जल्दी होता है। और फिर उसकी तो सेहत भी अभी बहुत अच्छी है। वह अभी ढेरों काम निपटा सकता है। पर, सरकार है कि...

दफ़्तर का वक़्त हुआ तो उसका मन हुआ कि दफ़्तर का एक चक्कर ही लगा आए। काम नहीं तो यार-दोस्तों हो ही मिल आएगा। वक़्त तो कट ही जाएगा। पर, दफ़्तर से अभी कल ही आया है। कल ही विदाई-पार्टी दी गई थी, और आज... नहीं, इतनी जल्दी ठीक नहीं लगता। यार-दोस्त क्या कहेंगे? यही, कि घर उसका दिल नहीं लगता। कोई सँभालने वाला नहीं। सो, न जाने में ही भली है। जाकर करना भी क्या है? क्या करना है? फिर भी जैसे उसका मन चुगलियाँ करने को हुआ, पर यह दफ़्तर थोड़े ही था। यह तो घर था।... वक़्त था कि जाने में नहीं आ रहा था। दत्ता साहब उठकर बगीची को पानी देने लगे।

कितनी प्यारी चमेली थी। हरी-कचूर गुलदाऊदी। भला, आज तक उसने चमेली को प्यार क्यों नहीं' किया? गुलदाऊदी को गुड़ाई क्यों नहीं की? और, दत्ता साहब बड़े चाव से तीले-तिनके निकालने लगे

कुछ थकान हुई हुई तो चाय का मन किया। उन्होंने आवाज़ लगाई, "कमला।"

"आई जी।"

"एक रुपया तो निकाल।"

"क्यों क्या करना है "

"चाय मंगाकर पीनी है... और क्या करना है'

"हा-हा-हा।" कमला ऊँचा-ऊँचा हँसी, "दीशी के बापू। यह घर है। यहाँ भला पैसे माँगकर चाय पीने की क्या ज़रूरत है?"

"ओह! सॉरी।" दत्ता साहब को अपनी ग़लती का अहसास हुआ।

ऐनक वाला टिड्डा

वह दौर से टक्कर ले सकता है, ज्वारभाटे में तैर सकता है, पागल हाथी के साथ सफ़र कर सकता है, छत पर रेंगती छिपकली की आँखों में देख सकता है, पर उस बाबू की तरफ़ नहीं देख सकता। वही बाबू, जो कागज़ों का दुश्मन है- बाबू किशन लाल कैशियर। ऐनक के अंदर से झाँकती चूहे-सी दो कमीनी आँखें, फ़िज़ूल बात पर हँसने वाले दाँत, किचमिच-सा कटा-फटा चेहरा। शर्मा का डूबा हुआ बक़ाया, तरेन की तरक्क़ी लगनी है - मिस आरती की सर्विस-बुक भेजनी है।...

-क्यों आरती जी, फिर भेज दें सर्विस बुक?

-भेज दो कैशियर साहब।

-ऐसे नहीं।

-और कैसे?

बस, अब उसके चेहरे को देखना कितना मुश्किल है- खचरे चूहे जैसी आँखें... ही-ही करते दाँत, फ़िज़ूल घसीटें मारता हुआ पुराना पैन।

आरती समझती है। बीस का नोट निकाल कमीने की ट्रे में रख देती है-

-चाय पी लेना बाबूजी।

-ही-ही-ही - कैशियर खचरी हँसी हँसता है।

-ही-ही-ही- आरती दिल में ही नक़ल उतारती है।

वह देखता है और डर जाता है। सचमुच कैशियर के सामने बैठना कितना मुश्किल है। पर वह उधर नहीं देखता। वह खिड़की में से बाहर देखता है, कितने अच्छे पेड़ है। कितने अजीब बादल हैं। वह उठकर खिड़की के पास आकर खड़ा हो जाता है। यह क्या? कुछ नहीं, बस आक का एक पौधा है। ऊपर बैठा आक का टिड्डा पत्ते कुतर रहा है। वह कैशियर की सीट की तरफ़ देखता है वहाँ भी एक टिड्डा बैठा है, ऐनक वाला टिड्डा... जो अभी-अभी मिस आरती की सर्विस-बुक कुतर रहा था। डर के मारे वह आँखें बंद कर लेता है। शेर से लड़ना आसान है, ज्वार-भाटे में तैरना आसान है...पर, इस आक के टिड्डे को देखना... कितना मुश्किल है।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

भूपिंदर सिंह पी.सी.एस.

पंजाबी के चर्चित लेखक। इनका निजी लघुकथा संग्रह 'सौ पत्त मछली के' पंजाबी-लघुकथा इतिहास में अपना एक विशिष्ट और अलग स्थान रखता है। लघुकथा के बारे में इनके विचार है कि लघुकथा लेखन कोई सरल काम नहीं है। 'गागर में सागर' भरना होता है। पाठकों की समय की कमी को केंद्र में रखते हुए उनकी साहित्यिक प्यास भी बुझानी होती और प्रकाश की ओर उँगली करके कोई दिशा भी देनी होती है। हँसी के बहाने ऐसी चोट करना जो धुर अंदर तक असर करे।

कृतियाँ:

- ऊँचा टीला
- मीना बाज़ार
- सिरों की बाज़ी
- सायरन की आवाज़
- किरणों का आह
- सलीब और सरहद
- इश्क़

संपर्क: समराला हाउस, समराला (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

पहुँचा हुआ हुआ फ़क़ीर

एक कमरा कह लो या छोटा घर। वहीं सास-ससुर। वहीं पर बड़ी ननद। वहीं छोटा देवर। और एक तरफ़ पति-पत्नी की दो चारपाइयाँ। बहूँ को 'दात-भीचनी' पड़ने लगी। पलभर में 'हाथों-पैरों' हो जाया करती। होंठों का रंग नीला पड़ जाता। हकीमों की दवा-बूटी करके देखी। डाक्टरों के टीके भी लगवाए। पर, कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा। किसी ने एक फ़क़ीर के विषय में बताया। सात मील पर उसका डेरा। पति ने साइकिल के हैंडिल पर उसे बिठाया और पैडल दबा दिए। रास्ते में एक छोटा-सा बाग़ पड़ा। हैंडिल चुभने का बहाना बनाकर पत्नी उतर गई। दोनों बैठ गए। जी भरकर बातें कीं। फिर दो आत्माएँ एक हो गई। कोई रोकने वाला नहीं था। जो मन में आया... किया।

"आज की यात्रा से फूल की तरह हल्की हो गई हूँ, बाबा जी। जैसे कोई रोग ही नहीं रहा हो।" डेरे पहुँचकर उसने कहा।

"तो हर बुधवार बीस चौकियाँ भरो बेटी। दवा-दारू की ज़रूरत नहीं। महाराज भली करेगा।"

भविष्य

"ज़बरदस्त बरसात और आँधी आने वाली है, बेटा।" मेरी बुर्ज़ुग माँ ने कहा।

"आपको कैसे मालूम?"

वह देख, चीटियां अपने अंडे मुँह में रखकर ऊँची और सुरक्षित जगह की ओर चढ़ी जा रही हैं।" मेरी माँ ने दीवार पर ऊपर की ओर चढ़ती हुई चीटियों की लंबी क़तार दिखाते हुए कहा, "क़ुदरत का करिश्मा है। इन्हें आने वाली ज़ोरदार बरसात का पहले ही पता चल जाता है।"

मैं चीटियों पर से निगाहें हटाकर बाहर झाँकने लगा। विद्यार्थी चुपचाप स्कूल की ओर जा रहे थे। मज़दूर चुपचाप कारख़ानों की ओर बढ़ रहे थे। कर्मचारी चुपचाप दफ़्तरों की ओर जा रहे थे। मुझे ये सब चीटियों-से लगे।

"कोई बड़ा इनकलाब आने वाला है।..." मैं बुदबुदाया।

मिट्टी का मोह

जेल की फिज़ा पर जैसे उदासी पोत दी गई। सूरज की पहली किरणों के साथ ही किसी क़ैदी को फाँसी पर लटका दिया जाना था। एक शरीर से साँसों का अंत होना था। किसी चहकते पंछी के बोल ख़त्म हो जाने थे। काले कोट और काली टाई वाले मैजिस्ट्रेट ने ख़ुश्क आवाज़ में अंतिम इच्छा पूछी।

"मेरे डूबते जाते बोलों की आख़िरी ख़्वाहिश पूरी कर सकोगे?" दो सहमे हुए होठों ने पूछा।

काले कोट और काली टाई ने हामी भरी।

"मेरे जवान हो रहे बेटे से कहना कि जिस चार बीघा ज़मीन के बदले मैं फाँसी चढ़ रहा हूँ... विरोधी धड़े से राज़ीनामा न कर ले।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

मेहताब-उद-दीन

जन्मः 15 दिसंबर, 1963, मलेर कोटला, ज़िला संगरूर (पंजाब)

शिक्षाः एम.ए., पी.एचडी पंजाबी के विद्यार्थी

संप्रतिः अध्यापन

लेखन यात्रा सन् 1979 से आरंभ, लघुकथाएँ 1988 से शुरू कीं। लघुकथा के अलावा कहानी लेखन व आलोचना भी। पंजाबी-लघुकथा पर आलोचनात्मक कार्य। अब तक लगभग 75 लघुकथाएँ प्रकाशित। पंजाबी के अलावा हिंदी, अँग्रेज़ी व उर्दू भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँः पंजाबी-लघुकथा पर पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'पंजाबी-लघुकथाः प्राप्तियाँ और संभावनाएँ' सन् 1988 में प्रकाशित।

"लघुकथा गद्य की वह विधा है जिसे पढ़ने के लिए तो कोई ख़ास समय की ज़रूरत नहीं, पर जिसे पढ़ने के बाद पाठक काफ़ी समय के लिए सोचने को विवश हो जाए। जिसमें इन्सानी ज़िंदगी के किसी एक पहलू के किसी एक क्षण को कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया गया हो। जिसमें साधारण-से साधारण घटना की अलग अहमियत नज़र आने लगे।"

संपर्कः 13/284, बागवानां गली, सरहंदी गेट, मलेर कोटला-148023, ज़िला-संगरूर (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

नारा

वह दफ़्तर से छूटकर साइकिल पर घर लौट रहा था। एक जगह फ़ुटपाथ पर दस-बारह लोगों की भीड़ देखकर वह कुछ देर के लिए रुक गया। एक भिखारी वहाँ मरा पड़ा था। शायद, भूख से, या फिर किसी बीमारी ने उसकी जान उसके शरीर से अलग कर दी थी। वह आगे बढ़ जाना चाहता था पर, लाश की शक्ल देखकर वह थोड़ा सोच में पड़ गया। वह शक्ल उसे कुछ जानी-पहचानी-सी लगी। दिमाग़ पर थोड़ा ज़ोर देने पर

उसे याद आया कि एक महीना पहले, राष्ट्रीय-स्तर पर 'ग़रीबी हटाओ' नारे को दर्शाती फोटोग्राफी प्रतियोगिता में जिस फोटो को एक लाख रुपये का पहला ईनाम मिला था, वह इसी बूढ़े भिखारी की ही तो थी।

समाज-सेवा

प्रांत की राजधानी में एक सरकारी उच्च अफ़सर का लड़का मॉडल स्कूल से घर लौटते वक़्त एअर-कंडीशन कार से बाहर निकलते हुए कुछ अधिक गर्मी के कारण चक्कर खाकर गिर पड़ा। उस अफ़सर की दोस्ती सेवा शिक्षा सचिव के साथ बहुत गहरी थी। अत: उसने टेलीफोन करके उसको प्रदेश में तेज़ लू चलने के बारे में जानकारी दी और अपने बच्चे के चक्कर खाकर गिरने की कहानी दोहराई। शिक्षा सचिव ने उसी वक़्त अपने स्टेनो को बुलाकर सभी अख़बारों को प्रेस नोट भिजवा दिया।

अगले दिन, अख़बारों में प्रकाशित यह ख़बर- "राज्य सरकार ने अलग-अलग शहरों और गाँवों में सर्वे करने के बाद, अधिक गर्मी और तेज़ लू चलने के कारण ग़रीब बच्चों का ध्यान रखते हुए स्कूलों में गर्मी की छुट्टियाँ 15 दिन पहले करने का फ़ैसला किया है।" पढ़कर राज्य के अध्यापक और बच्चे ख़ुशी से झूम उठे। उन सबने देश के केंद्रीय बाल कल्याण मंत्रालय को पत्र लिखकर राज्य के शिक्षा सचिव को सम्मानित करने के लिए विनती की, क्योंकि उसने ग़रीब और अधनंगें बच्चों का बहुत भला किया था। लोकतंत्र में लोगों की आवाज़ कैसे न सुनी जाती। उस वर्ष का राष्ट्रीय बाल कल्याण पुरस्कार जनता की इच्छा के मुताबिक़ शिक्षा-सचिव को ही मिला।

अब देश की सरकार, उसका नाम अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार के लिए, अंतरराष्ट्रीय बाल कल्याण संस्था के सम्मुख विचारार्थ रखने हेतु सोच रही थी।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

ठंडी आग

जबसे उसका करोड़पति बाप मरा था, वह बहुत घमंडी हो गया था। छोटे-बड़े किसी का लिहाज़ उसे नहीं रहा था। एक दिन शाम को वह अपनी कोठी के बाग़ीचे में टहल रहा था कि गेट के नीचे से एक कुतिया अंदर घुस आई। उसने उसे बाहर निकालने की कोशिश की... पर बेकार। उसके नज़दीक तब नौकर नहीं था। आख़िर उसने उसके पेट में लात दे मारी। कुतिया ने अपने दाँत फुर्ती से उसकी टाँग में गाड़ दिए। लहू की धाराएँ बहने लगीं।

उसने नौकर को आवाज़ें लगाई लेकिन वह दिनभर के काम से थककर आराम कर रहा था। ग़ुस्से में भरा वह उसके क्वार्टर की तरफ़ गया। नौकर एक बोरी के टुकड़े पर सोया हुआ था।

"हरामज़ादे। तू यहा पसरा पड़ा है... कितनी आवाज़ें मारी है तेरे को।" कहकर उसने उसकी कमर में लात जमा दी।

नौकर हड़बड़ाकर उठा और अपने मालिक की लात लहुलूहान देखकर डॉक्टर को बुलाने चला गया।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

मोहन शर्मा

जन्म: 16 फरवरी 1948, कांझला, ज़िला-संगरूर (पंजाब)
शिक्षा: एम.ए.., बी.एड.
संप्रति: शिक्षा विभाग में सुपरवाइज़र

लेखन यात्रा सन् 1964 से लघुकथाएँ सन् 1978 से शुरू कीं। लघुकथाओं के अलावा कहानी और कविता भी। लगभग 150 लघुकथाएँ प्रकाशित। कुछेक का हिंदी में अनुवाद। पंजाबी के अलावा हिंदी व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- टूटा हार,
- आँसुओं की धार,
- पूजा, सपनों के खंडहर (लघुकथा संग्रह)
- यादों की दस्तक (कविता संग्रह)
- अंदरूनी आग (कहानी संग्रह)

"लघुकथा 'गागर में सागर' बंद करने के समान है। वास्तव में ज़िंदगी में हर व्यक्ति संक्षेप में बात करना चाहता है। लघुकथा पाठक-लेखक के दरम्यान एक सहीं माध्यम है। समय का अभाव तथा तेज़-रफ्तारी के कारण हमें निश्चित रूप से आज की संस्कृति का साहित्यिक, शाब्दिक निरूपण लघुकथा में ही निहित मानने में हर्गिज संकोच नहीं करना चाहिए।"

संपर्क: किशनपुर बस्ती, नाभा गेट से बाहर, संगरूर (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

सोच का फ़ासला

एक आदमी अपने बनाए रंग-बिरंगे खिलौने बेच रहा था। एक कलाकार वहाँ से गुज़रा। उसने खिलौनों की तरफ़ नहीं, बल्कि बेचने वाले के चेहरे पर नज़र डाली। उसका झुर्रियोंभरा ग़मगीन चेहरा, उदास नज़रें और फटे हुए कपड़े देखकर उसे तरस आ गया। कलाकार ने उससे दो खिलौनों का मोल पूछा। उसने उनकी असल से तीन गुना ज़्यादा क़ीमत बता दी। कलाकार ने मुँहमांगी क़ीमत देकर खिलौने ख़रीद लिए। वह ख़ुश था

कि इस बहाने उसने एक मज़दूर की मदद की है। खिलौने बेचने वाला पैसे जेब में डालते हुए सोच रहा था,

'निरा बुद्धू है। चलो, अच्छा ठगा।'

जवाब

पंडाल रंग-बिरंगी झंडियों से सजाया जा रहा था। मंच पर गद्देदार कुर्सियाँ रखी जा रही थीं। प्रबंधक बड़े जोश के साथ इधर-उधर घूम रहे थे। लाउड स्पीकर पर कोई फ़िल्मी गीत चल रहा था। एक ख़ूबसूरत गेट तैयार करके उसपर 'स्वागतम' लिखा हुआ था। पंडाल से बाहर खड़ा एक आदमी वहाँ से गुज़र रहे लोगों को भीतर आने को प्रेरित कर रहा था। वहा से कुछ मज़दूर अपने काम को जा रहे थे। उसने उन्हें बुलाया,

"आओ भाई साहब, आओ भाई साहब। अभी मंत्री जी ने आना है। भाषण सुनकर जाना।"

मज़दूरों में से एक ने जवाब दिया, "हमें अपना काम प्यारा है। भाषण हमें रोटी तो नहीं दे देगा।"

सुनकर वह लाजवाब हो गया।

(पंजाबी से अनुवाद: अशोक भाटिया)

रिश्ता

अध्यापक ने अपने एक विद्यार्थी की ओर दस का नोट बढ़ाते हुए कहा,
"ऐसा कर, दुकान से एक किलो चीनी ले आ..."
विद्यार्थी ने गन्ना चूसते हुए लापरवाही के साथ उत्तर दिया,
"मैंने तो अब स्कूल में पढ़ना बंद कर दिया है।"

(पंजाबी से अनुवाद: सुभाष नीरव)

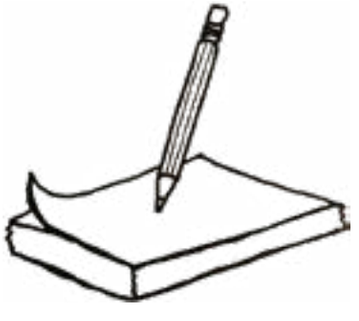

आर.एस. आज़ाद

जन्म: गाँव-खादनियार, बारामूला (कश्मीर)
शिक्षा: दसवीं
संप्रति: जनरल मेडिकल प्रेक्टिस
संपर्क: पद्मिन्नी डेंटल व मेडिकल क्लीनिक, बारमूला -193101 (कश्मीर)

विद्यार्थी जीवन से लेखन शुरू। कविता, कहानी, उपन्यास के अतिरिक्त लघुकथा लेखन भी। लघुकथाएँ सन् 1985 से आरंभ की। अब तक 250 लघुकथाएँ लिखी' जिनमें से डेढ़-सौ प्रकाशित। कुछेक लघुकथाओं का हिंदी में अनुवाद प्रकाशित। पंजाबी के अलावा, उर्दू, अँग्रेज़ी वं कश्मीरी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- लाटां (1975), कविता संग्रह
- लहू का तिलक, (1980) - कविता संग्रह,
- सोचों का सागर (1985) (लघुकथा संग्रह)
- सपनों का सच (लघुकथा- संग्रह प्रकाशनाधीन)

"पंजाबी-लघुकथा का अपना ही स्थान है। जितनी बड़ी बात कम-से-कम शब्दों में कही जाए और जो अपना अर्थ संप्रेषित करे, वह लघुकथा है।"

प्रयास

में समीक्षार्थ किताबें,
पत्रिकाएँ आदि संपादकीय पते पर ही भिजवाएँ,
यदि आप चाहते हैं, 'प्रयास' का यह प्रयास निरंतर जारी रहे
तो कृपया **100 रुपये**
भेजकर इसके विशेष-सहयोगी बनें.

दो लघुकथाएँ

अनंत भूख

एक आदमी दरिया के किनारे होटल चलाता था। एकदिन उसके पास एक अजनबी पहुँचा। उसका जिस्म हड्डियों का पिंजर था। आँखें गड्ढों की तरह धसी हुई थीं। फटे कपड़े थे। उसे कहने लगा,

"पेट भरकर खाना खाने के कितने पैसे?"

होटल के मालिक ने एक नज़र उसपर डाली और पाँच रुपये में ठेका कर लिया। वह आदमी दरिया के किनारे बैठ गया। मालिक उसे खाना भेजता रहा। जब वह छह रुपये का खाना खा गया तो मालिक ने रूखी रोटी भेजनी शुरू कर दी। वह भी कम नहीं था। रोटी के टुकड़े तोड़-तोड़कर बहते पानी में भिगोता और खाता जाता। जब वह दस रुपये का खाना खा गया तो मालिक ने पूछा, "बाबा, तू कितनी देर और रोटी खाता रहेगा।"

उसने बहते दरिया की तरफ़ इशारा करके कहा, "जब तक यह पानी बहता रहेगा।"

वेदी

उसके पड़ोस में पली, खेली रानी का ब्याह बड़ी सजधज के साथ हो रहा था। वह बिस्तर पर से उठकर शीशे के सामने जा खड़ा हुआ। अपने बदन को ध्यान से देखने लगा जो फुलबहरी के सफ़ेद दाग़ों से भरा हुआ था। एक दीर्घ निःस्वास छोड़कर वह बुदबुदाया,

"मैं इतना बड़ा इंजीनियर पर, इन सफ़ेद दाग़ों ने मुझे किसी के मुँह लगने लायक़ नहीं छोड़ा।"

नहा-धोकर वह ऑफ़िस जाने की तैयारी कर रहा था कि पड़ोस में दौड़ा-दौड़ी और शोर मच गया। बाराती, दूल्हे और उसके माँ-बाप पर मौहल्ले वाले जूत-पज़ार कर रहे थे। कह रहे थे,

"हमारी लड़की लेक्चरर फिर तुम इतना दहेज़ माँगो, यह नहीं हो सकता।"

फेरे लेने के लिए वेदी पर बैठी रानी ने अपना घूँघट उठा दिया। वह बोली,

"मैन इन लालचियों के घर नहीं जाना, वहा जाकर ज़िंदा जला देगें। निकाल दो इनको।"

कुछ देर बाद वह पड़ोसी इंजीनियर का हाथ थामकर पंडित को फेरे पढ़ने के लिए कह रही थी। बराती और दूल्हा एक-दूजे को बिटर-बिटर देख रहे थे।

(पंजाबी से अनुवाद: अशोक भाटिया)

रौशन फूलवी

जन्म: 13 अप्रैल, 1926, रामपुरा फूल (पंजाब)
शिक्षा: ज्ञानी।
संप्रति: माता तृप्ति ज्ञानी कॉलेज, रामपुरा फूल का संचालन।

लेखन यात्रा सन् 1942 से आरंभ। लघुकथाएँ न 1955 से प्रारंभ की। अब तक लगभग सौ लघुकथाएँ प्रकाशित। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी व उर्दू भाषाजों का ज्ञान। लघुकथाओं का हिंदी में अनुवाद प्रकाशित लघु पत्रिका 'सतिसागर' का संपादन।

"पंजाबी-लघुकथा 500 वर्ष पुरानी है। गुरुनानक जन्मसाखी जितनी। आज के मशीनी युग में यह समय की माँग है, पर लेखक को जितनी मेहनत से लिखनी चाहिए, उतनी मेहनत कम कलमें ही करती है। इस वजह से लघुकथा, साहित्य में अपना विशेष स्थान अभी बना नहीं पाई। लेकिन, यह सच है कि इसका भविष्य बहुत सुंदर है।"

संपर्क: संपादक सतिसागर, सदर बाज़ार, रामपुरा फूल-151103, ज़िला भटिण्डा (पंजाब)

दो लघुकथाएँ

हमारे सुहाग क्यों लूटे जा रहे हैं?

मैं हज़ारों युवतियों की सिसकियों में घिरा रहता हूँ। उनकी मुस्कानें आँसू बनकर यो जल रही हैं जैसे उनके पति आतंकवाद की आग में जले थे। इन सिसकियों का कोई जाति-धर्म अथवा राजनैतिक रंग नहीं है। इन युवतियों की गोद में भविष्य का ऐसा आदमी पल की रहा है जिसके जन्म से ही उसकी मुस्कान छीन ली गई है। हज़ारों युवतियों की इस भीड़ में से मंदिर की मूर्ति जैसी देवियाँ मेरी और दो पग आगे आती हैं। सबसे आगे मेरे समीप के नगर की चेतना है। विवाह को अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ था कि इसके करवाचौथ को गोली मार दी गई। इसके पीछे प्रतिभा है। इसके मंगल-सूत्र का मोती भी चेतना के साथ ही टूटा है। इनकी आँखों में छलकते आँसू पूछ रहे हैं कि हमारे सुहाग क्यों लूटे जा रहे है... मैं इन युवतियों को दिलासा देने के लिए उनके सिर पर अपना हाथ रखकर इतना ही कहता हूँ, "विधवा तुम ही नहीं, सारा देश ही विधवा

हो रहा है।" इन युवतियों के पीछे बेबे नानकी की बेटियाँ गुरकौर और धर्मकौर भी अपने जैसी सैकड़ों युवतियों के साथ अपने पीले आँचल में अश्रु लिए यही प्रश्न पूछ रही है कि हमारे सुहाग क्यों लूटे जा रहे हैं? मैं उनकी पीठ पर भी अपना वही कमज़ोर हाथ रखता हूँ। झूठा दिलासा देने वाले शब्द मेरे गले में ही घुट जाते हैं। इन सभी युवतियों के साथ समाज की झूठी हमदर्दी पलभर की झाग जैसी लगती है। इनकी जवानी पर तरस की जुगाली तो सभी करते हैं परंतु कोई भी जीवित मानव इनके बच्चों का बाप नहीं बनता। मैं, चेतना, प्रतिभा, गुरकौर और धर्मकौर जैसी हज़ारों युवतियों की सिसकियों में घिरा मन-ही-मन उस क्रांति को पुकारता हूँ, जो युवतियों के सुहाग लुटने से बचाए।

बच्चे वाली विधवा

गुड़िया के सो जाने के बाद जीती भी सोना चाहती थी, परंतु नींद तो जैसे जाने वाला साथ ही ले गया हो। कभी वह अलमारी में रखी तस्वीर की तरफ़ देखती है तो कभी गुड़िया की ओर। गुड़िया न होती तो वह किसी और के साथ शादी कर लेती। परंतु, बच्चे वाली विधवा किधर जाए... उस जैसी विधवा तो फिर मौत से ही शादी करती हैं। भला हो उसके पति के मित्र क्रांति का जिसने उसको एक माडल स्कूल में नौकरी दिलाकर जीने का सहारा दिया। औरत रोटी की चिंता से मुक्त हो तो उसका दुख आधा रह जाता है। पर, बाक़ी आधा..? रोटी के साथ तो तन चलता है, मन तो नहीं। जीती कहने को तो मन की स्थिरता को ही सुख का साधन मानती थी, पर अंदर से वह गीली लकड़ी की तरह जलती थी। इच्छाएँ उसकी धुआँ बनकर साँस को दबाती रहती थीं। समाज के डर से हँसने को भी तरस गई थी। बहुत सोचती जो लोग हँसी वापस नहीं ला सकते, उनसे क्या डरना। परंतु, डरती न तो क्या करती? उस जैसी जवान विधवा को देखकर लोगों के मुँह से राल टपकती थी, वह भी बदाश्त करनी आसान नहीं थी। इसीलिए, उसने क्रांति को घर आने से मना कर दिया था। एक बार उसके पति के होते क्रांति की शादी की बात चली थी तो उसने हँसते हुए कहा था;

"भाभी... कोई तुम्हारे जैसी लड़की मिलें तो आज शादी के लिए तैयार हूँ।"

यह बात उसको अब तक नहीं भूली थी। परंतु, अब वह बच्चे वाली विधवा थी और क्रांति एक खाते-पीते घर का लड़का था। एक दिन वह जीती को मिलने स्कूल आया और बड़े गंभीर स्वर में कहने लगा,

"भाभी। मैं तुझे अकेली को ज़िंदगी की भट्टी में नहीं तपने दूँगा।"

वह उसके मुँह की तरफ़ देखती ही रही। क्रांति उसकी आँखों में उसके अंदर को पढ़ रहा था। कुछ पल बाद जीती के होठों पर आई मुस्कान ही उसको 'हाँ' लगी और उसने पास खड़ी गुड़िया को गोदी में उठा लिया। इसी पल जीती के अंदर से अपने जाने वाले पति के लिए एक ठंडी साँस निकली और उसकी आँखों में ग़म और ख़ुशी के आँसू झलक आए।

(पंजाबी से अनुवाद: स्वर्ण सलूजा)

श्याम सुंदर दीप्ती

जन्म: 30 अप्रैल, 1954, अबोहर (पंजाब)
शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी व समाजशास्त्र)
संप्रति: मेडिकल कॉलेज, अमृतसर में सीनियर लेक्चरर

लगभग सभी विधाओं में 1970 से लेखन। लघुकथाएँ पिछले चार-पाँच वर्षों से आरंभ की। अब तक 80 लघुकथाएँ पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी, अँग्रेज़ी, आदि में भी प्रकाशित। 'मिन्नी' पत्रिका का संपादन। पंजाबी के अलावा हिंदी व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- मैं और तुम (1978) काव्य (हिंदी)
- सिर्फ़ एक दिन (1983) काव्य (हिंदी)
- पांचवे पहर की ओर (1987)
- संपादित पुस्तकें
- अष्टधारा (1987) काव्य (हिंदी)
- शतकथाएँ (1987) लघुकथा (हिंदी)
- आईना (1988) कहानियाँ (हिंदी)
- खड़े पानियों का कहानीकार (1985) पंजाबी
- भीखी का पूर्ण रचना संसार (1986) पंजाबी

"लघुकथा किसी भी रूप से बड़ी रचना का संक्षिप्तीकरण नहीं है और न ही उसका सार मात्र। लघुकथा अपने आपमें एक संपूर्ण रचना है। बस, शब्दों में मिन्नी (लघु) है।"

संपर्क: 58, गोकल नगर, मजीठा रोड, अमृतसर (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

संबंध

किशोर के घर से लौटते-लौटते अँधेरा हो गया। कभी-कभार मिलना होता। वर्तमान विषय को लेकर ही बात चल पड़े तो वक़्त बीतते पता नहीं चलता। सी.आर.पी. के जवानों की चौकी के पास पहुँचते ही विसलें सुनाई दीं। स्कूटरों, कारों को रोककर वाहन के पेपरों की जाँच हो रही थी। मैं भी रुक गया।

"पापा, रुक क्यों गए?" बेटी ने पूछा। मैं डिक्की से स्कूटर के काग़ज़ निकालने लग गया और सिपाही मेरे क़रीब आ गया। "पापा, यह अंकल अपने को जानते हैं?"

मैं बेटी के सवाल पर मुस्कराया।

"हम इनके घर तो कभी गए नहीं, पापा।" फिर उस सिपाही को संबोधित करके बोली, "आपका घर कहा है, अंकल?"

मुझे डिक्की से कागजपत्र नहीं मिले। मैं सोचने लगा, कहाँ गए? फिर ख़याल आया कि स्कूटर धोया था तो बाहर निकालकर रखे थे। फिर स्कूटर में रखना भूल गया। पर, अब इसे क्या कहें। कोई परेशानी ही न खड़ी कर दे। पुलिसवालों का क्या भरोसा।

"पापा, चलो न, देखो तो कितना अँधेरा हो गया है, मम्मी को डर लग रहा होगा।'

मैन बेटी की तरफ़ देखा तो सिपाही ने कहा, "जाओ साहब।"

फिर बेटी ने कहा, "पापा, मुझे अंकल के घर लेकर चलोगे न? अंकल कह रहे थे उनके घर भी एक गुड़िया है, मेरे जैसी।"

"ज़रूर चलेंगे बेटे।" कहकर मैंने सिपाही से हाथ मिलाया और स्कूटर स्टार्ट कर आगे बढ़ गया।

दादी

हम दोनों दोस्तों का विवाह तक़रीबन एक साथ ही हुआ। फिर इत्तिफाक़न, बच्चे भी साथ-साथ ही हुए। हाँ, इत्तिफ़ाक़ से राजेश के घर लड़का हुआ और मेरे घर लड़की। दोनों जब भी मिलते बच्चों के बारे में एकाध बात तो अवश्य हो ही जाती। 'बैठने लग गया है... घुटनों के बल चलने लगी है... सब के पास चली जाती... रोता बहुत है... पिछला सारा हफ़्ता बीमार ही रहा, दाँत निकाल रहा है शायद... दो दाँत निकल आए हैं नीचे वाले...' ऐसी ही कोई-न-कोई बात, सिर्फ़ अख़बार की सुर्ख़ी की तरह, बस।

अब दोनों बच्चे एक ही उम्र के थे तो ज़रूरी है कि विकास भी एक साथ हो रहा था। दो-तीन बार मिलने पर राजेश ने दाँतों का ज़िक्र किया। इधर बेटी के दाँत नहीं निकले थे। वैसे, मैंने पढ़ा तो था कि हफ़्तों-महीनों का फ़र्क़ कोई महत्त्व नहीं रखता। परंतु, जब राजेश ने कहा कि दो दाँत ऊपर वाले भी नज़र आने लगे हैं तो बात कुछ ध्यान देने की लगी। परंतु, मैं ज़्यादा चिंता में नहीं था। लड़की हर तरह से स्वस्थ और हँसमुख थी।

एक रविवार को मैं घर पर ही था। कहीं कोई प्रोग्राम नहीं था। मैं धूप में चारपाई बिछाकर पढ़ रहा था और अम्मा बेटी को नहलाने से पहले बदन पर मालिश कर रही थी। तभी मेरे कानों में आवाज़ पड़ी,

"हैं... हैं... दाँत निकालती है? मैंने चेहरे से अख़बार हटाकर देखा। माँ कह रही थी, "निकलवाऊँ दाँत? हैं। इसी तरह दाँत निकालेगी तो अगले घर वालों ने रखना भी नहीं, लड़की है लड़की। दाँत नहीं निकालते होते। समझी?"

पालतू

"भाई साहब, दो मिनट रुक जाइए... बिल्ली ने रास्ता काटा है।"

"घबराओ नहीं। चले आओ, चले आओ। यह तो अपनी ही है। घर की पाली हुई। सारा दिन आगे-पीछे ही घूमती रहती है। अगर इस तरह रुकने लगे तो कभी चल ही न पाएँ।

(लेखक द्वारा स्वयं अनूदित)

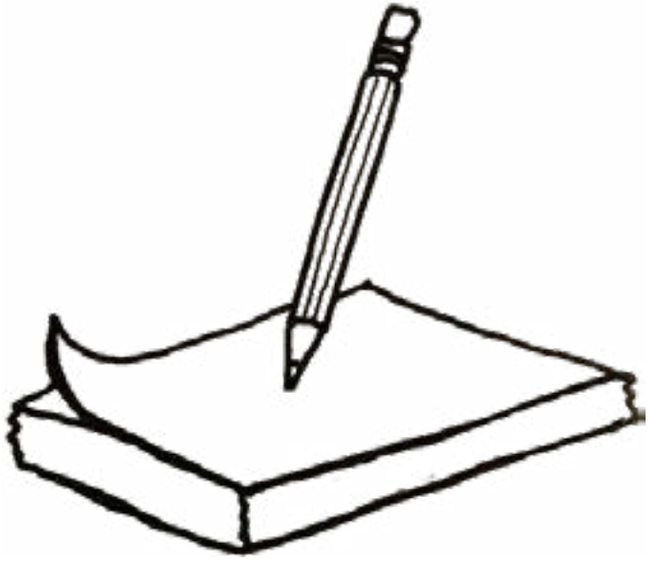

शरन मक्कड़

जन्म: मार्च, 1939
शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी)
संप्रति: स्वतंत्र लेखन

लेखन-यात्रा सन् 1969 से आरंभ की। लघुकथाएँ सन् 1975 से। लघुकथाओं के अतिरिक्त कहानी, कविता, लेख आदि भी। कुछेक रचनाओं का अंग्रेज़ी व हिंदी में अनुवाद प्रकाशित। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी और अँग्रेज़ी भाषा का भी ज्ञान।

कृतियाँ:

कहानी संग्रह:

- न दिन, न रात (1976)
- दूसरा हादसा (1978)
- टहनी से टूटा मनुष्य (1979)
- धुआँ और धूल (1980)
- कच्ची ईंटों का पुल (1986)

कविता संग्रह:

- अपराध का शगन (1976)
- कब कोई आएगा (1981)
- खुंडी धार (1982) **लघुकथा संग्रह**
- चेतना की मिट्टी (1986)
- रिश्तों की परिक्रमा (1987)

हयाती दा बादबान,
सलीब ते टँगी तितली,
किश्ती विच सिमटी झील।
'अब जूझन को दाव'

"समस्याओं और फ़लसफ़े की गठरी सिर पर उठाए तेज़ क़दमों से दौड़ी जाती साहित्यिक चींटी।"

संपर्क: 11, दयानंद नगर, लॉरेंस रोड, अमृतसर (पंजाब)

तीन लघुकथाएँ

अल्टीमेटम

सरोवर की मछलियों ने मिलकर बग़ावत कर दी। उन्होंने मिलकर प्रस्ताव पास किया और इसका अल्टीमेटम प्रबंधकों तक पहुँचाया कि उनके रहने के लिए कोई और बंदोबस्त किया जावे। वे हर्गिज-हर्गिज यहाँ नहीं रह सकतीं। प्रबंधकों को हाथों-पैरों की पड़ गई। उन्हें भय था कि यदि इस बात की भनक पत्रकारों को पड़ गई तो उन्होंने खामख्वाह इस बात का स्कैण्डल बना देना है। विरोधी धड़े को तो आदत होती है, बात का बतंगड़ बनाने की। देश-विदेश से आने वाले यात्रियों' पर इस बात का असर पड़ेगा, इतना सोचकर ही उनके पसीने छूटने लगे। उन्होंने मिलकर मशविरा किया कि किसी-न-किसी प्रकार मछलियों को राज़ी किया जाए। प्रबंधकों का एक टोला इक्ट्ठा होकर, मछलियों के पास गया और कहने लगा,

"देखो, तुम्हारी सुविधा का हम कितना ख़याल रखते हैं। तुम्हारी ख़ुराक हमारे लिए पौष्टिक भी है और स्वाद-भरी थी। फिर भी तुम यहाँ पर ही पूरी तरह सुरक्षित हो। यह पवित्र सरोवर है। देश-विदेश से चलकर लोग यहाँ आते हैं। तुम भाग्यशाली हो कि तुम इस सरोवर में रहती हो। अगर, तुम यहाँ नहीं रहोगी तो इससे हमारी बहुत बदनामी होगी।" वे हर प्रकार से मछलियों को अपनी दलील देकर रास्ते पर लाने की कोशिश कर रहे थे।

"तुम ऐसा कहते हो तो हम एक शर्त पर अपना अल्टीमेटम वापस ले लेती हैं। वह यह है कि कोई आदमी इस सरोवर का चरणामृत तो पी सकता है, पर इसमें स्नान नहीं कर सकता।" मछलियों ने अपना फ़ैसला सुनाया।

"वह क्यों?" उन्हें यह सुनकर हैरानी हुई।

"वह इसलिए कि तुम्हारी राजनीतिक चालों के मैल से हमारी सेहत पर बहुत बुरा असर पड़ा है। अब हमें डर है कि कहीं तुम्हारी तरह हमारी आत्मा भी मलीन न हो जाए।"

करिश्मा

बिल्ली आख बंद करके 'सिमरन' कर रही थी,

"न कुछ तेरा, न कुछ मेरा... दुनिया रैन-बसेरा..."

उसे इस तरह जाप करते देखकर चूहे ने पूछा, "बहन, आज यह क्या?"

"भैया चूहे। मुझे माफ़ कर दे। मैंने तुझ पर बहुत अन्याय किया है। आज से तेरी-मेरी दुश्मनी ख़त्म। मैंने मांस खाना छोड़ दिया है। पक्की शाकाहारी बन गई हूँ। सोचा, जो चार दिन रह गए हैं, अपना जन्म सँवार लूँ।" इतना कहकर बिल्ली ने फिर सिमरन करना शुरू कर दिया।

"बहन बिल्ली। ये आध्यात्मिक बातें तूने उसी साधु के घर से सीखी हैं, जिसके घर से चोरी करके दूध पीती रही?"

"नहीं भैया। मैंने तो चोरी करना ही छोड़ दिया है।"

"कोई नहीं बहन। चोर के घर चोरी करने से पाप नहीं लगता। बल्कि, इस तरह उसका पाप घटता है।" चूहे ने अपनी दलील दी।

"हा भैया चूहे, तू भी ठीक कहता है। अच्छा, आ हम सब पिछले वैर-विरोध भूलाकर एक हो जाए। ...आ, इस दोस्ती का आगाज़ हम गले मिलकर करते हैं।"

चूहा हैरान था कि बिल्ली आज मनुष्यों-सी बातें कैसे कर रही है।

"हा, तू ठीक कहती है। दोस्ती का आग़ाज़ तो गले मिलकर ही करना चाहिए।"

चूहे की यह बात सुनकर बिल्ली ख़ुश हो गई। चूहे के मुलायाम-मुलायम मांस का स्वाद उसके मुँह में घूम रहा था।

चूहे ने बड़ा भोला-सा मुँह बनाकर बिल्कुल बिल्ली की तरह ही 'न कुछ तेरा, न कुछ मेरा...' जपते हुए कहा, "बहन, वह भी कह रहा था, मैंने बिल्ली के साथ बड़ा अन्याय किया है। आज से, मेरी और उसकी दुश्मनी ख़त्म... सो, हम ऐसा करते है, चल! तू पहले भेड़िए के गले मिल ले, फिर मैं तेरे गले लगूँगा।"

यह सुनकर बिल्ली के पैरों के तले से ज़मीन खिसक गई। उसे उम्मीद नहीं थी कि चूहा भी इतना समझदार हो सकता है।

"अच्छा चूहे, तू गले भले न मिल, पर एक बात तो बता दे कि यह समझ तुझे आई कैसे?" बिल्ली इसका भेद जानने के लिए उतावली थी।

"सच बताऊँ। तुझे तो पता ही है कि मेरी आदत सबकुछ बिना देखे कुतरने की है। बस, इसी तरह किताबें कुतरते हुए मेरी नज़र एक किताब पर पड़ गई और मैंने पहली बार उस किताब को बड़े ही प्यार से कुतरा। बस, यह उसीका करिश्मा है।" चूहा बिल्ली के चेहरे की उत्सुकता देखकर मुस्करा रहा था। "तू यह जानने के लिए उतावली है न कि आख़िर वह किताब कौन-सी थी? चूहे ने बिल्ली के चेहरे पर आई उत्सुकता को पढ़ते हुए पूछा। "वह किताब थी... ह्यूमन साइक्लोजी।"

इतना कहकर चूहा अपने बिल में घुस गया।

आदत

मन की चाहतों का केसर पूजा की सुगंधी में घोलकर, दीये की लौ में आत्मा की जीत जगाकर, पूजा का थाल अनदेखी हसरतों से सजाकर, एक पुजारिन रोज़ अपने देवता की आरती उतारती थी। आशा की किरण रोज़ उसकी साँसों को चूमती कि आज उसका देवता ज़रूर आएगा।... पर, वह कभी नहीं आया।

और, एक दिन...

वह पूजा का थाल भूल गई। आरती भूल गई। उस दिन उसका देवता पूजा का थाल लिए उसके सामने खड़ा था और वह सोच रही थी कि उसका देवता उससे मिलने के लिए आया हैं या फिर, आदत से मजबूर होकर अपनी पूजा करवाने के लिए।

(पंजाबी से अनुवादः सुभाष नीरव)

सुलक्खण मीत

जन्म: 15 मई 1938, मिंटगुमरी (पाकिस्तान)
शिक्षा: एम.ए.. इतिहास, आनर्स (पंजाबी)
संप्रति: सरकारी कॉलेज में प्रिंसीपल

लेखन यात्रा सन् 1958 से आरंभ की। कहानी, कविता, गीत, ग़ज़ल, एकाकी, नाटक व उपन्यास लिखे। लघुकथाएँ सन् 1962 से शुरू की। अब तक लगभग 150 लघुकथाएँ पंजाबी की छोटी-बड़ी पत्रिकाओं में प्रकाशित्। कुछेक रचनाओं का हिंदी व अँग्रेज़ी में अनुवाद प्रकाशित। पंजाबी के अलावा, हिंदी, उर्दू व अंग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ: सुलगती बर्फ़ (लघुकथा संग्रह) सन् 1975

"लघुकथा, साहित्य का एक उत्तम और ज़रूरी रूप है। बल्कि मेरी राय में लघुकथा लेखन एक कला है। गागर में सागर हर लेखक नहीं भर सकता। लघुकथा को शायद वही लेखक साहित्य का ज़रूरी रूप मानने से झिझकते हैं जिनमें लघुकथा लिखने की योग्यता नहीं।"

संपर्क: शहीद ऊधम सिंह सरकारी कॉलेज, सुनाम ज़िला संगरूर (पंजाब)

चार लघुकथाएँ

गुरुदेव

मेरे पड़ौसी घड़ीसाज़ की दुकान खुलने का कोई वक़्त नहीं था। बस जब गुरुद्वारे में भोग पड़ता, वह अपने हाथ दाढ़ी से साफ़ करता 'वाहेगुरु वाहेगुरु' कहता हुआ दुकान खोलता, गुरुनानक साहब की तस्वीर को धूप देता, पुर्जो को झाड़ता और अपना काम शुरू कर देता।

रात को मेरी घड़ी रुक गई थी। ज्योंही सुबह उसकी दुकान खुली तो मैं सिर पर पगड़ी रखते हुए उधर चल दिया। उसने मिश्री-घुली ज़ुबान में मुझे कई बार 'आओ जी'-'आओ जी', कहा। मैंने 'आए जी।' कहकर घड़ी उतारी,

"भाई साहब, इसे देखना ज़रा।"

उसने घड़ी को आई-ग्लास पर चढ़ाकर चिमटी से उसकी एक नाड़ी देखी और बताया, "पाँच-सात मिनट लगेंगे। अभी ठीक कर देता हूँ।"

मैं वहीं बैठ गया। उसने आँख झपकते में घड़ी चलती करके मेरे हाथ में रख दी।

सेवा पूछने पर वह बोला, "सिर्फ़ पाँच रुपये।"

मैंने पाँच रुपये दे तो दिए पर मुझे दुख बहुत हुआ। मैं अपना दुख ज़ाहिर करने का तरीक़ा सोच रहा था। तभी उसने चाय का ऑर्डर दे-दिया। चाय आने पर उसने बात चलाई, "तुम कभी गुरुद्वारे नहीं आए भाई साहब।"

मैंने कहा, "नेक कमाई करते हैं। भूल बक्शाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती।"

घड़ीसाज़ ने 'वाहिगुरु-वाहिगुरु कहते हुए मेरे हाथ पकड़ लिए। दो रुपये वापस मुझे देते हुए वह बोला,

"माफ़ करना गुरुदेव, मेरे दिमाग़ के कपाट तो आज ही खुले हैं।"

भूख

"मुझे तो भूख लगी है, रोटी मिल सकेगी?" एक आदमी पूछता है।

"मुश्किल... बहुत मुश्किल।" बाक़ी दो आदमी बोलते हैं

"मेरी पत्नी तो मुझे भूखा देखकर ही छोड़ गई है। क्या मेरे तन और पेट की भूख मिट सकेगी?" दूसरा आदमी अपनी भूख दर्शाता है।

बाक़ी दो बोलते हैं, "बहुत उम्मीद नहीं। कोशिश कर देखो।"

"मैं अपनी पत्नी से रोटी तो रूखी-सूखी खा आया हूँ। पर, क्या मेरे मन की भूख मिट सकेगी?" इसी तरह तीसरा आदमी बाक़ी दोनों से पूछता है।

"कुछ हद तक।" बाक़ी दोनों कहते है।

पहला आदमी जेबें काटने चल देता है।

दूसरा आदमी पत्नी की खोज में निकल पड़ता है।

तीसरा आदमी कहानी लिखने बैठ जाता है – 'भूख।'

रिश्ता

भेदी ने जगीरे चोर को बताया,

"आज रुपालो गाँव के एक घर में चोरी हो सकती है।"

"कैसे?" जगीरे चोर की आखे फटने को हुईं।"

"घरवाला घर नहीं है।"

"ठीक है।" जगीरे चोर ने कुतरी हुई मूँछों को ऊपर चढ़ाया।

मुर्गा बोलने से पहले ही जगीरा चोर भेदी के बताए घर में घुस गया। अगले पल वह ट्रंकों-पेटियों के पास खड़ा था। तेजो को चोर का शक़ हुआ। वह चारपाई से उठकर दबे

पैरों स्विच के पास पहुँची। बल्ब जला तो सचमुच ही सामने एक आदमी खड़ा था। चोर शब्द जैसे उसके गले में ही अटक गया था। तेजो और जगीरे ने एक-दूसरे को पहचान लिया था। जगीरे चोर की आँखें एकदम झुक गई थीं तेजो ने पूछा,

*ओ जगीरे, तुझे बहन का घर ही मिला था चोरी करने को?"

"मैंने सोचा तो था कि हमारे गाँव से एक लड़की रुपालो में ब्याही हुई तो है, पर मुझे क्या पता था कि तू इसी घर में है।" कहकर जगीरा चोर दहलीज़ पार करने लगा।

"अब किधर जगीरे?" तेजो ने उसकी बाँह पकड़ते हुए कहा।

"गाँव।" जगीरे ने तेजो की तरफ़ देखे बिना ही कहा।

"बैठ जा। चाय पीकर जाइयो अब। मैं चाय रखती हूँ |

जगीरा चोर तेजो की बात पर हैरान होता हुआ एक बच्चे की चारपाई पर बैठ गया। चाय आने तक वह जैसे पछताता ही रहा। चाय पीकर चलते वक़्त जगीरे ने पतलून में से दस का नोट निकाला। उसने वह नोट तेजो के ठंडे हाथ में दबा-सा दिया।

"ओ जगीरे, ये क्या?" तेजो ने मुड़े हुए नोट को देखते हुए पूछा।

"यह भाई का फ़र्ज़ बनता है बहन।" कहकर जगीरा एकदम दहलीज़ पार कर गया।

गाँव में अभी भी शांति थी। कहीं भी किसी कुत्ते के भौंकने की आवाज़ नहीं आ रही थी।

खेत खाती बाड़

अर्जुन सिंह की आँख खुल गई। उसने पत्नी से पूछा,

"जसवंत, रात को स्टोर की खिड़की बंद कर दी थी?"

"हाँ जी।"

"अभी मुझे लगा, जैसे ट्रंकों पर बिल्ली ने छलांग मारी हो।"

"वैसे ही लगा होगा। सो जाओ।"

जसवंत सो गई। अर्जुन सिंह अभी भी आसमान में तैरते बादलों को देख रहा था। कभी-कभी साथ की गली से चौकीदार के डंडे की आवाज़ सुनाई दे जाती थी। अंदर फिर खड़का हुआ। उठा। इसबार अर्जुन सिंह चुपचाप 'वाहेगुरु' कहकर उठा। वह जब तक आँगन की लाइट के स्विच तक पहुँचे, चोर उससे पहले आँगन में पहुँचकर मेन गेट की तरफ़ बढ़ने लगा था।

"मेरे हाथ से बचके कहाँ जाएगा पुत्तर।" कहकर उसने चोर को अड़ंगा मारा।

तब तक जसवंत कौर भी जाग चुकी थी। उसने जब स्विच दबाया तो उनका आँगन पड़ोसियों से भरा हुआ था। अर्जुन सिंह से लड़ने वाला चोर उनके मोहल्ले में रहता पुलिस का सिपाही जगदेव था। लोग उसी वक़्त जगदेव को थाने ले गए। अगले दिन जगदेव बाहर था और अर्जुन सिंह थाने के अंदर। उसे उग्रवादी करार दिया गया था।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

हमदर्दवीर नौशहरवी

जन्मः 1 दिसंबर, 1937
गाँवः नौशहरा पन्नुयाँ, ज़िला-अमृतसर (पंजाब)
शिक्षाः एम.ए. राजनीति, पंजाबी व इतिहास
संप्रतिः कॉलेज में प्रोफ़ेसर

सन् 62 से लेखन आरंभ। लघुकथा सन् 71 से आरंभ की। 300 से अधिक लघुकथाएँ प्रकाशित। कई लघुकथाओं का हिंदी, उड़िया, गुजराती आदि में अनुवाद। पंजाबी के अतिरिक्त हिंदी व अँग्रेज़ी भाषाओं का ज्ञान।

कृतियाँ:

- बर्फ़ के आदमी और सूरज
- खंडित मनुष्य की कथा
- कहानी अभी ख़त्म नहीं हुई
- छोटे-छोटे हिटलर
- नीरो बंसी बजा रहा था

"पंजाबी-उर्दू-लघुकथा का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। बहुत से लेखक लिख रहे हैं।"

संपर्कः कविता भवन, माछीवाड़ा रोड, समराला (पंजाब)-141124

चार लघुकथाएँ

मुर्दे

-लाश तेरे दरवाज़े के सामने पड़ी है। दिन का समय है। रास्ता चल रहा है। अभी-अभी क़त्ल हुआ है। तुझे ज़रूर पता होगा।

-नहीं साहब। मुझे कुछ नहीं पता।

-तुम पास ही ताश खेल रहे हो। अभी-अभी क़त्ल हुआ है, तुम्हें तो पता होगा।

-नहीं साब। हमें कुछ नहीं पता।

-तू इस गली में साइकिल-रेहड़ी लिए फिरता है। ज़रा पहचान न यह लाश किसकी है।

-पता नहीं साब।

-ऊपर को क्या देख रहा है, इधर देख।

-साब। मुझे तो बस इतना पता है कि यह लाश मेरी नहीं।

नेक आदमी

-भाई साहब। दुर्घटना में मरने वाला कौन था?
-कौन-सी दुर्घटना?
-जो आपके पड़ोस में आग लगने के कारण कल हुई।
-पड़ोस में! मुझे तो पता नहीं।
-मैंने सोचा आपकी उनके साथ दीवार सांझी है। आपको अवश्य पता होगा।
-शायद कोई जान-पहचान वाला ही हो, अफ़सोस कर आऊँ।
-अफ़सोस। चलो में भी आपके साथ चलता हूँ।
-बहुत अच्छा था बेचारा।
-हाँ, बहुत अच्छा होता था। बहुत ही नेक...।

(पंजाबी से अनुवादः श्याम सुंदर अग्रवाल)

नीची जगह का पानी

थोड़ी-सी बारिश होती। पानी फिसलता और नीची जगह पर आकर जमा हो जाता। जमा होता जाता। मक्खियाँ-मच्छर और गंदगी फैलती।

"एमरजैंसी राज में हमसे फ़ैसलों में तो कोई ग़लती नहीं हुई। स्थानीय स्तर पर कर्मचारियों ने अच्छे फ़ैसलों को लागू करने में शायद ज़्यादतियाँ की होंगी।" एमरजैंसी के कारण हार गई सरकार के मुखिया का विचार था।

"चौकीदार ज़िम्मेदार है। घूँट लगाकर कहीं सो गया होगा। पीछे से सरकारी चीनी-गोदाम में चोरी हो जाने पर सारा गोदाम खाली हो गया।" सुरक्षा अधिकारी का ब्यान था।

"संबंधित फ़ाइल गुम हो गई है तो संबंधित क्लर्क से पूछो। उसकी लापरवाही से ही गुम हुई है।" विभाग प्रमुख कह रहा था। विभाग में लाखों का षड्यंत्र पकड़े जाने के बाद अचानक संबंधित फ़ाइल गुम हो गई थी।

"स्वदेशी मिल्स में मिलावट। हो सकता है, रात की शिफ़्ट वाले मज़दूर से कोई कोताही हो गई हो और तबेले के बाहर पड़ी घोड़ों की लीद मसाले में मिल गई हो। लक्खू के बच्चे को ज़रूर सजा मिलनी चाहिए।" मिल-मालिक पुलिस को कह रहा था।

-माली ज़िम्मेवार है।"
-चपरासी ज़िम्मेवार है।
-भंगी ज़िम्मेवार है।
-मज़दूर ज़िम्मेवार है।

बारिश हो रही है। नीचे और गंदे तालाब में पानी अब और नहीं समा सकता। और

अब पानी का दरिया बनकर चल पड़ा है। किनारे पर खड़ी मज़बूत इमारतें रेत के महलों की तरह बह रही हैं।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

संस्कार

वह अस्पताल में पड़ी थी। अपनी आख़िरी साँस गिन रही थी। आख़िरी समय पास आता देख मैं जीती का मुँह देखने गया था। मैं भाइया जी को साथ लेकर अस्पताल पहुँचा। भाइया जी उसके जेठ लगते थे और वह ताउम्र भाइया जी से पर्दा करती रही थी।

"मैं सुखपाल हूँ। बरनाला से..."

मैं पहचानती हूँ। बड़ा अच्छा किया। आख़िरी समय दर्शन..."

उसे खाँसी लग गई। उसका चेहरा नंगा था, बाक़ी शरीर सिर समेत ढका हुआ था। उसका दायाँ हाथ कंबल से बाहर था। वह इतनी कमज़ोर हो चुकी थी कि अपनी गर्दन भी ख़ुद नहीं मोड़ सकती थी। साथ बैठी औरत ने उसका निर्जीव हाथ कंबल के नीचे कर दिया।

'अकेले ही आए हो?

"भाइया जी, तुम भी अंदर आ जाओ।"

"तुम अब हिम्मत करो।"

भाइया जी अंदर आ गए।

"अभी तो तुम्हें बेटे-बेटियों की शादी करनी है। तुम तो..."

उसके निर्जीव हाथों में पता नहीं कहाँ से इतनी शक्ति आ गई। उसने बड़ी तेज़ी से अपने सिर का कपड़ा खींचकर अपना चेहरा ढक लिया। अब चारपाई पर लाल कंबल ओढ़ा हुआ था। पता नहीं, कंबल के नीचे उसके शरीर में कोई साँस बाक़ी थी भी या नहीं। आख़िरी वक़्त शायद उसे यह चिंता थी कि अस्पताल के बिस्तरे से जब उसकी लाश को बाहर निकालेंगे तब उसका चेहरा यदि नंगा हो गया तो...।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक भाटिया)

कुछ अन्य पंजाबी लघुकथाएँ

अनवंत कौर

पहिए

आठ महीनों से मास्टर सुलक्खण सिंह की पेंशन के कागज़ क्लर्क की अलमारी में धूल चाट रहे थे। बेचारा दूसरे-तीसरे दिन दफ़्तर का चक्कर मार आता, पर काग़ज़ थे कि निकलते ही न। उससे तीन महीने बाद रिटायर हुआ प्रेमचंद्र जब अपने पूरे कागज़ निकलवाकर ले गया तो सुलक्खण सिंह को बड़ी हैरानी हुई। सुलक्खण सिंह अपनी उत्सुकता दूर करने के लिए प्रेमचंद्र के पास गया और पूछने लगा,

"तेरे काग़ज़ इतनी जल्दी कैसे निकल आए? "

"मेरे काग़ज़?" प्रेमचंद्र हँसा, इन्हें पहिए लगे हुए हैं।"

"पहिए?"

"हा भई, इन कागज़ों को क्लर्क की मेज़ से चलाकर साहिब की मेज़ तक ले जाने के लिए मुझे सौ-सौ के नोटों के पहिए लगाने पड़े हैं।"

(अनुवादः सुभाष नीरव)

अवतार सिंह दीपक

श्रद्धांजलि

वह सुधारवादी लेखक था। समाज का सुधार करते-करते वह अपना आप बिगाड़ बैठा। पूरे दो महीने वह शहर के 'सैनिटोरियम' में सड़ता रहा। पर, किसी ने कभी उसकी बात न पूछी। और आख़िर, एक दिन वह इस संसार को अलविदा कह गया। उसकी मौत पर सरकारी स्तर पर एक यादगार समारोह किया गया। मुख्यमंत्री से लेकर गली के चौधरी तक ने उसको श्रद्धांजलि दी। गली के चौधरी ने अपनी श्रद्धांजलि में लेखक की दयनीय आर्थिक स्थिति से संबंधित कुछेक ऐसी आँखोंदेखी घटनाओं का ज़िक्र किया, जिन्हें सुनकर हर श्रोता की आँखों से आँसू बह निकले।

समारोह ख़त्म हुआ तो चौधरी ने धीमे से मेरे पास आकर पूछा,

"कौन था यह लेखक?"

"अपनी गली में रहता था।"

"हमने तो आज तक इसकी शक्ल भी नहीं थी देखी।"

(अनुवादः सुभाष नीरव)

जिंदर

जवाब नहीं आया

वह गर्भवती थी। वह यानी उसकी घरवाली, उसकी धर्मपत्नी।

वह नित्य पत्र लिखता। वह नित्य जवाब देती।

उसके हर पत्र में जुदाई का शिकवा होता।

उसके हर पत्र में तड़प का समुंदर होता।

दिन कम होते गए।

फिर उसने पत्र लिखा। उसके लड़की हुई थी।

लड़की के बारे में उसने पत्र लिखा। उसकी आँखों जैसी... उसके होठों जैसी... उसके गालों जैसी... उसके बालों जैसी।

वह हर रोज़ पत्र की प्रतीक्षा करती।

वह प्रतीक्षा करती रही... बस, प्रतीक्षा करती रही।

(अनुवाद : श्याम सुंदर अग्रवाल)

दर्शनसिंह आष्ट

तरकीब

पहले बहुत से लोग उसके घर के पिछवाड़े अक्सर पेशाब कर जाया करते थे। उसने दीवार पर भी कई बार लिखा,

'यहाँ कुत्ते पेशाब करते हैं।'

पर किसी पर कोई असर न हुआ।

उसे एक तरकीब सुझाई। उसने, जहाँ पर लोग अक्सर पेशाब कर जाते थे, वहाँ दो ईंटें रखी और फिर उन ईंटों पर एक लाल रंग का दुपट्टा रख दिया।

अब लोगों ने वहाँ पर सदा के लिए पेशाब करना छोड़ दिया है और बहुत से लोग वहाँ अब मत्था टेककर आगे जाते हैं।

वह अपनी तरकीब पर ख़ुश था।

पंजाबी के हिंदी लघुकथाकार

अशोक भाटिया

भीड़

कैमिस्ट की दुकान के आगे भीड़ जमा होने लगी। कैमिस्ट ने सिपाही को बताया,

"वो देखिए, वह औरत दवा के दस रुपये दिए बिना भागी जा रही है।"

सिपाही औरत के पीछे-पीछे हो लिया।

भीड़ ने कहा, "देखी, साली चोर है। ऐसे भागी जाती है जैसे बाप का माल हो।"

वह औरत अपने घर में पहुँच गई। सिपाही ने अंदर झाँककर देखा। वह औरत अपनी बीमार माँ के कंधे पकड़े हुए उसे दवा दे रही थी। उनकी पतली हालत देखकर सिपाही वापस हो लिया।

आकर उसने कैमिस्ट से कहा, "ले, अपने दस रुपये।" और जेब से दस का नोट देकर चुपचाप चल दिया। भीड़ में से एक फुसफुसाया,

साले ने ग़रीब औरत को भी नहीं छोड़ा।"

अपराधी

सर्द रात थी। वह सूनी सड़क पर जा रहा था। एक सूने ढाबे पर रखे पीतल के बर्तन देखकर उसके मन में चोर छा गया। उसका मालिक किसी काम से अंदर गया था। ढाबे पर चल रहा रेडियो सुनने के बहाने वह नज़दीक आ गया। अभी बर्तनों पर हाथ मारने को ही था कि अंदर से मालिक आ गया और बोला,

"आओ जी।"

"बस... गीत सुन रहा हूँ ज़रा।" उसकी आवाज़ सहमी हुई थी।

"तो अंदर आकर बैठ जाइए।"

लाचार होकर वह बैठ गया। गीत सुनकर जब वह बाहर आया तो बोला,

"देखो, तुम अपने ढाबे को यो खुला छोड़कर मत जाया करो। आजकल दुनिया भूखी हो रही है। कड़छी-पतीले लोग आम उठा लेते हैं।"

ढाबेवाला गद्‌गद्‌ हो गया और हाथ बाँधकर खड़ा हो गया।

(55/13, एक्सटेंशन, अर्बन एस्टेट, करनाल-1320018 हरियाणा)

अशोक लव

सामने वाला कमरा

शैवाल कक्षा में खिड़की के पास बैठता था। मैं निराला की कविता पढ़ा रहा था। वह बहुत देर से खिड़की से बाहर देखे जा रहा था। विद्यार्थियों का ध्यान इधर-उधर हो तो मुझसे पढ़ाया नहीं जाता। उसकी ओर तीन-चार बार देख चुका था। परंतु उसे तो मानो किसी की चिंता ही नहीं थी। वह कक्षा हमेशा प्रथम आता था पर इस प्रकार की अनुशासनहीनता तो असहनीय थी। मैं उसके पास जाकर खड़ा हो गया। उसे कुछ पता न चला।

"कहा खोए हुए हो?" उसे कंधे से पकड़कर झकझोरते हुए कहा।

"सर। वो..." वह घबरा गया। फिर एकदम खड़ा हो गया। पूरी कक्षा हँस पड़ी।

"बैठ जाओ।. कविता पढ़ा रहा हूँ। ध्यान नहीं दोगे तो समझ नहीं पाओगे।" उसे बिठाते हुए कहा।

वह रो पड़ा।

घंटी बज गई। पीरियड समाप्त हुआ। स्टाफ़रूम जाकर भी उसका चेहरा आँखों के सामने आता रहा। एक विद्यार्थी को उसे बुलाने भेजा।

"बैठो शैवाल।" वह आया तो उसे साथ वाली कुर्सी पर बैठने के लिए कहा। वह झिझकते-झिझकते बैठ गया।

"तुम कक्षा में रो क्यों पड़े थे? मैंने तो कुछ भी नहीं कहा था।"

"सर। आज माताजी की मृत्यु हुए पूरे दो वर्ष हो गए हैं। साथ वाले अस्पताल में उनकी मृत्यु हुई थी। मैं अस्पताल के उसी कमरे की ओर देख रहा था।"

मैं अवाक् उसका मुख देखता रह गया। यदि कक्षा में उसे डाँट दिया होता तो...

मृत्यु की आहट

राजधानी का पश्चिमी क्षेत्र धमाकों से गूँज उठा। गैस के सिलेंडर पटाख़ों के समान फट-फटकर आसमान में उड़ने लगे। उनके टुकड़े साथ लगे गली-मोहल्लों में गिरने लगे। पूरे क्षेत्र में कोहराम मच गया। लोग छतों पर चढ़कर दूर लगी आग को देखने लगे। बात-ही-बात में ख़बर फैल गई कि विशाल टैंकों में भरी रसोई गैस को भी आग लग गई है। दस-बारह किलोमीटर तक सब स्वाहा हो जाएगा। अभी तक सिलेंडरों का फ़टना और उड़ना लोगों के लिए एक तमाशा था। अब तमाशा मौत बन गया। लोग घर-बार छोड़कर भागने लगे। स्त्रियों ने धन-गहने ही सँभाले। सभी जल्दी-से-जल्दी मौत के दायरे से बाहर निकल जाना चाहते थे। नरेंद्र अपने मित्र के घर राजौरी गार्डन गया हुआ था। आग लगने का समाचार सुन मोटरसाइकिल दौड़ाता आया। जल्दी-जल्दी पत्नी और दोनों बच्चों को पीछे बिठाया। मोटरसाइकिल स्टार्ट करने ही वाला था कि माँ रोती-चिल्लाती आई, "बेटे। मुझे भी साथ ले चल। यहाँ ज़िंदा जलाने के लिए मत छोड़ जा।"

नरेंद्र ने मोटरसाइकिल स्टार्ट करते हुए कहा, "इन्हें छोड़कर अभी आता हूँ। आकर

तुम्हें ले जाऊँगा।"

देखते-ही-देखते मोटर-साइकिल आँखों से ओझल हो गया। माँ अवाक दहलीज़ पर खड़ी देखती रही। फिर आँगन में आकर आग के रूप में आती मृत्यु की आहट सुनने लगी। उसकी आखो के सामने वैधव्य और नन्हे नरेंद्र को जवानी तक पहुँचाने के कष्टप्रद दिनों के अनेक चित्र घूम गए। आँखों से अश्रुओं की धाराएँ फूटती चली गईं।

अचानक गली में शोर मच गया। आग पर दमकलवालों ने नियंत्रण पा लिया था। रसोई गैस से भरे विशाल टैंकों तक आग पहुँची ही नहीं थी। माँ ने तटस्थ भाव से जीवन को लौट आते महसूस किया।

तभी मोटरसाइकिल रुकने की आवाज़ आई। नरेंद्र पत्नी और बच्चों के साथ घर में दाख़िल हो रहा था। माँ की आँखों से दो बूँद अश्रु निकलकर लुढ़क गए। वह उठकर अपनी कोठरी की ओर बढ़ गई।

(फ़्लैट -13, द एअर फोर्स स्कूल, सुब्रोतो पार्क, दिल्ली छावनी)

कमलेश भारतीय

ओले

गेहूँ की जो सोनेरंगी बालियाँ महिंद्र की आँखों में ख़ुशी छलका देती थीं, वही ओलों की मार के बाद उसकी आँखों के आँसुओं की तरह झर गई और जो बचीं वे काली पड़ गई जैसे उसकी मेहनत राख में बदल गई हो। जैसे महिंद्र की मेहनत को मुँह चिढ़ा रही हो। आकाश से गिरे ओलों पर महिंद्र का क्या बस चलता? नहीं चला कोई बस। तंबू थोड़े तान सकता था खेतो पर। अनाज मंडी में क़ुदरती विपत्ति जैसे इन्सानी विपत्ति में बदलती नज़र आई। गेहूँ की ढेरी से, जो गेहूँ की ढेरी से ज़्यादा उसके सपनों की ढेरी अधिक थी, जिसमें कच्चे कोठे पर मरम्मत के सपने से लेकर गुड्डो की शादी तक का सपना समाया हुआ था। सरकार के दलाल मुँह फेरकर चलने लगे... जैसे महिंद्र के सपनों को लात मारकर गिराकर चले गए हो और महिंद्र किसी नन्हे बच्चे-सा बालू के घरौंदे से ढह गए सपनों के कारण बिलखता रह गया हो।

शाम के झुटपुटे में वही सरकारी दलाल ठेके के आसपास दिखाई दिए, महाभोज में शामिल होने जैसा उत्साह लिए... और महिंद्र समझ गया कि वे उसके शव के टुकड़े-टुकड़े नोचने आए हैं। जब तक वह उन्हें भेंट नहीं चढ़ाएगा तब तक उसका गेहूँ नहीं बिकेगा, उसके सपने नहीं जगमगाएँगे। अँधेरी रात में ही जुगनूँ-से टिमटिमाते... सूरज की रोशनी में बुझ जाएँगे। बोतलों के खुलते हुए डाट देखकर उसके मुँह से गालियों की बौछार निकल पड़ी,

"हरामजादो। ओलों की मार से तुम सरकारी दलालों की मार हम किसानों को ज़्यादा नुकसानदेह है।"

और दलाल बेशर्मी से हँस दिए- "स्साला हरामी।"

अनमोल

सारा बँटवारा बड़े आराम से हो गया था और गण्यमान्य व्यक्ति चलने ही लगे थे कि एक अनमोल वस्तु का बँटवारा करने की समस्या पेश हुई। जिसके नाम पर वह बनी थी, सबसे ज़्यादा अधिक हक़ वही जता रहा था। दूसरे भाई इस चिंता में थे कि उस वस्तु को लाते-लाते समय लगेगा और वे तब तक बहुत-सी वस्तुओं से तरसते रह जाएँगे। आख़िर, वे सभी एक-दूसरे पर झपट पड़े। जिसके हाथ में वह अनमोल वस्तु थी उसने प्रमुख व्यक्तियों के आगे फेंक दी। सबने हैरानी से देखा,

वह घर का साझा राशन-कार्ड था।

(शारदा मौहल्ला, नवाँ शहर, दोआबा-144514 (पंजाब)

प्रेम विज

चेहरे

"सत्या कल जल्दी आना। मुन्ना की बर्थ-डे पाटी है, काफ़ी लोग आएँगे।"

सत्या अपने छोटे बेटे को भी साथ ले आई, यह सोचते हुए कि भी पार्टी में कुछ खा लेगा। पार्टी में बच्चे कम थे, सुंदर कपड़ों और ख़ुशबू से भरे आदमी व औरतें अधिक थीं। बैरे से थोड़ी-सी मिठाई लेकर सत्या ज्यूँ ही अपने बेटे को देने बाहर गई तो मालकिन ने देख लिया, "अरे, सत्या बेटे को इतनी मिठाई मत खिलाना, कहीं बीमार ही न हो जाए।" मालकिन ने कहा।

फिर पार्टी में जाकर अतिथियों की प्लेटों में ज़बरदस्ती मिठाई डालने लगी।

'इतना मत खिलाओ। कहीं बीमार न पड़ जाऊँ।" अतिथि कहते। लेकिन वह मुस्करा देती,

"अरे आप कौन सा हर रोज़ आते हैं। यदि खाते-पीते बीमार भी पड़ गए तो दवाई खा लेना।" और प्लेट में मिठाई रख देती।

रैली का महत्त्व

रैली ख़त्म हो चुकी थी। लोग घरों को लौट रहे थे। सोहन के हाथ में लाठी देखकर जसबीर पूछ बैठा,

"यह लाठी किस लिए वापस ले आए?"

"चारपाई टूट चुकी है, यार।'

"यह झंडा क्यों बगल में दबा रखा है तुमने?"

"थैला फट चुका था भाई।"

फिर वे दोनों तेज़ी से घर की तरफ़ बढ़ने लगे।

(746, सेक्टर-8 बी, चंडीगढ़-160018)

रमेश बतरा

नई जानकारी

सर्दियों का धुपहला दिन था। हम सपरिवार पिकनिक मनाने, शहर से कुछ दूर स्थित सरोवरतट पर पहुँचे हुए थे। हम कुछ लोग ताश खेलने में मस्त थे कि हमारी बिटिया भागी-भागी आई और कुछ ही फ़ासले पर खिल रहे गुलाब के फूलों की तरफ़ इशारा करके बोली, "दादी...दादी, फूल के साथ काँटे क्यों होते हैं?"

दादी ने उसे बड़े प्यार से समझाया,

"फूल और काँटे साथ-साथ होने का मतलब है... जीवन में सुख और दुख संग-संग चलते रहते हैं। इसलिए, इनसान को सुख में इतराना नहीं चाहिए और दुख से घबराना नहीं चाहिए।"

मगर बिटिया के पल्ले कुछ नहीं पड़ा। उसने बड़े असमंजस से माँ को देखा तो माँ ने तपाक से सास को शह देने वाले अंदाज़ में बोलना शुरू कर दिया, "

फूल बहुत सुंदर होता है... इसके साथ कोटे होने का मतलब है ... हर सुंदर चीज़ को सँभालकर रखना चाहिए। जैसे तुम और तुम्हारा भैया बहुत सुंदर हो, इसलिए दादी, मम्मी-पापा सब तुम दोनों को ख़ूब सँभालकर रखते हैं।"

"धत्। आप कोई काँटा है क्या?" बिटिया संतुष्ट नहीं हुई और मेरे पास आकर लाड़ जताती हुई बोली, "किसी को मालूम नहीं, सिर्फ़ मेरे पापा को मालूम है।"

मेरी इज़्ज़त ख़तरे में पड़ गई... मगर तभी मुझे एक चालाकी सूझ गई और मैंने बड़े गर्व से "कहा, यह तो हमारी बिटिया को भी मालूम है। सोचो और अच्छी तरह सोचकर बताओ कि फूल के साथ कोटें क्यों होते हैं?"

"बता दूँ?"

बिटिया आँखें मटकाकर सचमुच सोचने लगी और कुछ देर सोचने के बाद ताली बजाती हुई बोली, "पता चल गया... पता चल गया। काँटे इसलिए होते हैं, जब परियाँ इस झील में नहाने आती हैं तो अपने कपड़े इन पर टाँग देती है।"

"बिल्कुल ठीक।" हम सब इस तरह चहक उठे मानो हमें एक नितांत नई जानकारी मिल गई हो।

चलोगे... चलेंगे!

रास्ता पैदल का ही था। मेंरी तबीयत सुस्त थी। मैंने एक रिक्शावाले को रोक लिया,

"चलोगे... स्टेशन?"

"चलूँगा जी, अपना तो काम ही चलना है।" रिक्शावाला गद्दी से उतरकर बाइज़्ज़त बोला, "आइए, बैठिए।"

किसी रिक्शावाले से इतना सम्मान पाकर मैं आत्ममुग्ध हो गया। मेरी आवाज़ का

अंदाज़ ही अज़ब हो उठा, "कितने पैसे लेगा?"

"जो मरज़ी हो दे देना साहेब।" रिक्शावाले ने कहा।

मगर मुझे उसकी विनम्रता में कोई सदाशयता महसूस नहीं हुई, बल्कि वह मुझे संदेहास्पद प्रतीत होने लगा। रिक्शावाला और उसकी बोलचाल में इतना सलीक़ा, इतनी लज़्ज़त। ज़रूर गुंडई करेगा। बिना कुछ तय किए बिठा लेगा और स्टेशन पर पहुँचकर अपने साथियों के बीच ज़्यादा पैसे माँगकर मुझे ज़लील करेगा। इसलिए मैंने कुछ खिन्न होकर कहा,

"न, तू पहले ही बता दे। अपने-आप पैसे देने का झंझट मैं नहीं पालता।"

"झंझट काहे का साहेब, बीस-पच्चीस पैडल भर का तो रास्ता है... अब तक तो पहुँच भी जाते इस्टेशन।"

"फिर तू बोल ही क्यों नहीं देता अपने मुँह से?"

मैं अपनी बात पर अड़ा रहा। रिक्शावाले ने मुझे निगाह भर देखा और एकदम लापरवाह होता हुआ बोला,

"आप तो ऐसे कह रहे हैं जैसे मैं साला कोई मोहर ही माँग लूँगा।... आइए बैठिए, मैं उधर ही जा रहा हूँ... आप वहाँ उतर जाइएगा... बस्स।"

हालात

-आज उदास उदास से लग रहे हो।

-नहीं तो।

-चेहरा तो उतरा हुआ है।

-तुम्हें लग रहा होगा।

-कुछ सोच रहे हो शायद।

-न, सोचना भला क्या है?

-फिर चुप क्यों हो?

-समझ नहीं आता कि आख़िर किया क्यां जाए। सुबह के लिए मुट्ठीभर अनाज भी नहीं है।

-ख़ुशनसीब हो यार, मैंने तो आज भी कुछ नहीं खाया

(रविवार्ता, नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली।)

श्याम सुंदर अग्रवाल

मकान

मकान को देख-देखकर किराएदार बहुत ख़ुश हो रहा था। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि शहर में इतना बढ़िया मकान किराए के लिए खाली मिल जाएगा। सब कुछ ही बढ़िया था। बेडरूम, ड्राइंग-रूम, बाथरूम, किचन। कहीं भी कोई कमी नहीं थी।

"छत तो पक्की ही होगी।" उसने मकान मालिक से सवाल किया।

"हाँ जी, बिल्कुल पक्की। ऊपर पानी की टंकी भी है। आप जाकर देख आओ।"

किराएदार सीढ़ी चढ़कर छत पर गया और कुछ देर बाद वापस आ गया। अब वह निराश था। "अच्छा जी, आपको तकलीफ़ दी। मकान तो बहुत बढ़िया है, पर मैं यहाँ रह नहीं सकता।" इतना कहकर वह धीरे-धीरे बाहर को जाने लगा।

मकान-मालिक ने कहा,

"आपको कोई वहम हो गया है। मकान में भूत नहीं है और न ही पुलिस चौकी इसके आसपास है।"

फिर भी, किराएदार ने पीछे पलटकर नहीं देखा तो मकान मालिक ने आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़ लिया,

"मकान तो चाहे आप किराए पर न लो, पर ये तो बता जाओ इसमें कमी क्या है? लोग तो कहते हैं कि शहरों में मकानों का अकाल-सा पड़ गया है। पर, यहाँ इतना बढ़िया मकान खाली पड़ा है।" मकान मालिक पूरे का पूरा प्रश्नचिह्न बनकर किराएदार के सामने खड़ा था।

किराएदार ने मालिक मकान से अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा,

"आपको नहीं पता कि आपका मकान घर के योग्य नहीं है। आपके मकान के एक तरफ़ गुरुद्वारा है, और दूसरी तरफ़ मंदिर।"

निम्नस्तर

पुलिस ने मज़दूर यूनियन के नेता को नंगा कर शहर के घंटाघर के चारों ओर डंडे से गधे की तरह हाँका। जनता के एक शिष्टमंडल ने पुलिस अधीक्षक के पास शिकायत की। पुलिस अधीक्षक किसी अन्य राज्य से था। उसने शिष्टमंडल को गहरे अफ़सोस के साथ कहा,

"क्या बतलाऊँ, मुझे तो ख़ुद बहुत शर्म आ रही है। ये आपके राज्य की पुलिस ही है जो ऐसे निम्नस्तर के ढंग अपना रही है। हमारे राज्य में तो पुलिस ऐसे लोगों को गोली से उड़ा देती है और किसी को ख़बर तक नहीं होती।"

(252, शास्त्री मार्किट, कोटकपूरा-151204 (पंजाब)

पंजाबी-लघुकथा की उत्पत्ति

डॉ. मेहताब-उद-दीन

साहित्य का सीधा संबंध समाज से है। साहित्य की विभिन्न विधाओं की उत्पत्ति को समय-समय पर सामाजिक आवश्यकताओं द्वारा हुआ माना जा सकता है। साहित्य का विकास भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सभ्यता के विकास के समकक्ष ही होता आया है। साहित्य के विषयों और रूपों में बड़े परिवर्तन मुख्य रूप से सामाजिक जीवन में आए परिवर्तनों से होते हैं। सबसे पहले मनुष्य सामूहिक इकाई के रूप में संयुक्त नहीं हुआ था अपितु दो-दो, चार-चार के समूहों में स्वयं को घास-फूस-पत्तों से ढककर गुफाओं, गहन जंगलों में अथवा वृक्षों पर चढ़कर जीवन निर्वाह करता रहा था। उसने अभी बोलना भी नहीं सीखा था। उस समय वह एक- दूसरे से इशारों द्वारा अथवा कोई स्वांग रचकर अपनी आपबीती दूसरे साथियों को समझाता था। स्वांग करने या ऐसी हीं हरकतों को आज हमने नाटक की संज्ञा दी है। फिर प्राकृतिक प्रकोप जैसे जंगल की आग, तेज़ आँधी, अंधड़, वर्षो, बाढ़, भूकंप, जंगली जानवरों के भय ने मनुष्य को सामूहिक रूप में रहने के लिए विवश किया। तब उसे अपने भावों को इशारों द्वारा दूसरों तक पहुँचाने में बाधा आई। तब कुछ समझदार मनुष्यों ने मिल-बैठकर भावों को प्रकट करने के लिए ध्वन्यात्मक चिह्न निश्चित कर दिए। इस प्रकार भाषा की उत्पत्ति हुई। पहले मनुष्य सूर्य, अग्नि, वायु जल जैसी प्राकृतिक आपदाओं से डरा करता था। वे उन्हें सर्वोच्च शक्तिमान मान उनकी पूजा करने लगा और उसने उनके विषय में मनगढ़ंत कहानियाँ घड लीं। ये वही कहानियाँ हैं जिन्हें आज हम मिथक कहते हैं। अवनेर जीस के अनुसार मिथक केवल धर्म ही नहीं है, मिथकों के वैज्ञानिक अध्ययनोपरांत प्राचीन युग के मनुष्य के चेतन एवं अवचेतन मन की गहराइयों का सूक्ष्म अध्ययन किया जा चुका है। यह ऐतिहासिक

हिंदी के सुप्रसिद्ध लघुकथाकार अशोक भाटिया द्वारा संपादित
'पंजाबी की श्रेष्ठ लघुकथाएँ'
(लघुकथा संकलन)
शीघ्र प्रकाश्य

विकास के प्रारंभिक पड़ावों' और प्राचीन लोगों के कलात्मक सृजन की अभिव्यक्ति भी है। भाषा की उत्पत्ति के साथ मनुष्य न पशु जीवन से छुटकारा पाकर में पैर रख लिए थे। उसका जीवन पहले से अधिक व्यस्त हो गया था। सभ्य जीवन वह पशु-पालन और कृषि के कार्य करने लगा था। शिकार भी करने लगा था और नई वस्तुओं की खोज में इधर-उधर घूमता रहता था। तब उसके मन में प्रश्न उठा कि अब तक उसने जो उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं और आविष्कार किए हैं, उन्हें आने वाली पीढ़ियों तक कैसे सुरक्षित रखा जाए। उसे लिपि की आवश्यकता हुई। उसने भाषा के लिए कुछ प्रतीकात्मक चिह्न निश्चित किर दिए। इन्हें लिखने के लिए उसने मिट्टी की स्लेटों, पत्थरों, वृक्ष के पत्रों आदि का प्रयोग किया। लिपि के आ जाने से साहित्य का जो स्वरूप सर्वाधिक विकसित हुआ वह कविता थी। प्राचीनकाल में साहित्य के बीस भागों में से उन्नीस भाग कविता के होते थे। इसलिए किसी व्यक्ति ने मनुष्य जाति से कुछ भी कहना होता था, अधिकांशत: कविता द्वारा ही कहता था। यह बात यहा तक ठीक है कि बहुत पुराने समय में विज्ञान, गणित और चिकित्सा आदि भी कविता अथवा छंदों में लिखे जाते थे।

सामाजिक परिवर्तनों के कारण साहित्य में आए परिवर्तनों के अन्य उदाहरण हम पंजाबी साहित्य से सहज ही ले सकते हैं। जिस प्रकार भूपवादी युग में क़िस्सा- काव्य प्रचलित था। फिर पूँजीवाद के आगमन से गद्य का विकास हुआ। कथा- साहित्य विकसित हुआ। उपन्यास, छोटी कहानी, मिन्नी कहानी आदि विधाओं ने जन्म लिया। मिन्नी कहानी लघुकथा के विषय में विस्तृत साहित्यिक चर्चा करने से पूर्व मैं पाठको को पंजाबी गद्य-साहित्य और कथा-साहित्य के आरंभ का परिचय देना उचित समझता हूँ। कला, विज्ञान, साहित्य और दर्शन आदि क्षेत्रों में यूनान का योगदान सर्वाधिक माना जाता है। यूनानियों ने इतिहास को सर्वप्रथम लिपिबद्ध किया और जीवन-दर्शन पर, धर्म से अलग रहकर विचार किया। परंतु मैक्सिम गोर्की का मत है- मानवता का इतिहास यूनान और रोम से नहीं, भारत और चीन से आरंभ करना चाहिए।' इसी प्रकार साहित्य और कला के विकास के विषय में भी उसका कहना है कि इसका आरंभ होमर के इलियड और ओडिसी से नहीं, अपितु भारत की, कुल मिलाकर पूर्व की पौराणिक कथाओं से होना चाहिए। उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में पंजाबी साहित्य को अन्य भाषाओं के साहित्य से गुणरहित न समझते हुए अब हम पंजाबी साहित्य की ओर मुड़ते हैं।

शेख़ फरीद जो पंजाबी कविता साहित्यों के पिता कहे जाते हैं, ने पंजाबी में पहलीबार इस्लामी और भारतीय सभ्यता का समन्वयन कराया। उन्होंने पंजाबी बोली में डूबकर मानवीय प्रेम और आध्यात्मिकता दोनों का प्रचार किया। इसके पश्चात् उनका अनुसरण करते हुए शाह हुसैन, बुल्लेशाह, अली हैदर, गुलाम फरीद आदि पंजाब के सूफी कवियों ने हिंदू-अहिंदू, भारतीय-अभारतीय, निर्गुण- सगुण विचारधाराओं का मेल कराया। डॉ. परमिंदर सिंह और कृपाल सिंह कसेल पंजाबी साहित्य की उत्पत्ति बाबा

फरीद से पूर्व आठवी-नौवीं शताब्दी अथवा नाथ- जोगियों द्वारा रचित साहित्य से मानते हैं। वैसे पंजाबी भाषा में पहले उपलब्ध काव्य-ग्रंथ 'संदेश टाँक' को माना जाता है जो छठी-सातवीं के लगभग रचा गया।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, प्रत्येक भाषा का साहित्य तत्कालीन सभ्यता को प्रकट करता रहा है। पंजाबी साहित्य की धरोहर बहुत समृद्ध है। वैसे भी "युग युग से चली आ रही भारतीय सभ्यता की निरंतरता, प्राचीन पंजाब का ही इतिहा है। इसलिए अंग्रेजों का पंजाबी भाषा और साहित्य के प्रति थोड़ा-सा भी सहाय दृष्टिकोण इसे ऊँची मंजिले प्राप्त करने में सहायक हुआ। डॉ. गुरचरण सिंह अरशी अपने शोधग्रंथ में विस्तारपूर्वक पंजाबी के मुद्रणालयों के आरंभ का उल्लेख करते हैं - "भारत के लिए मुद्रणालय ईसाई मिशनरियों की देन है। जब ईसाई पादरियों ने लुधियाने अपना केंद्र स्थापित किया तब पंजाब में एक भी मुद्रणालय नहीं था। विलियम केरी ने मामन और विलियम वार्ड के सहयोग से देशी वर्णमाला के टाइप तैयार करवाए। इनमें गुरुमुखी, मुलतानी, डोगरी और लंडे के टाइप भी थे। इनके द्वारा ही बाईबल का पंजाबी भाषा में पहला अनुवाद सन् 1811 ई. में प्रकाशित हुआ। भी केरी पुस्तकालय सिरामपुर में सुरक्षित है। 1834 ई. में ईसाई मिशनरियों की ओर से प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट में पादरी न्यूटन और पादरी विलसन द्वारा कलकत से मुद्रणालय लुधियाना लाने का उल्लेख मिलता है। इस मुद्रणालय में सर्वप्रथम 'ए सर्मन फार द वर्ल्ड' का फ़ारसी रूपांतर प्रकाशित हुआ। इस प्रकार मुद्रणालयों की स्थापना से पुस्तकों का प्रकाशन सरल होना। दैनिक समाचारपत्रों और मासिक पत्रिकाओं का प्रचलन आरंभ हो गया। लुधियाने के पादरियों ने धार्मिक साहित्य के अतिरिक्त पंजाबी व्याकरण और कोश भी, प्रकाशित किए।" नि:संदेह प्राकृत ग्रंथों महात्मा बुद्ध के जीवन-वृतांत और वचनों तथा फ़ारसी में वार्ता की रचनाओं ने पंजाबी में भी वार्ताओं की उत्पत्ति के लिए प्रारंभिक काल में ही संभावनाएँ उत्पन कर दी थीं। मुग़ल काल में भिन्न-भिन्न प्रकार के और बृहद आकार की वार्ताएँ अस्तित्त्व में आईं। वचन, साखियाँ, टीकाएँ, परमार्थ, महात्म्य, गोष्ठा, प्राचीन कृतियों के अनुवाद, उपदेशनामे, हुक्मनामे आदि इस काल की वार्ताओं के प्रसिद्ध स्वरूप हैं। परंतु, आधुनिक वार्ताओं की नींव ईसाई मिशनरियों की धर्म प्रचार के लिए हज़ारों पुस्तकें प्रकाशित कराने और जन भाषा के निकट रहकर अपने विचार प्रकट करने से पड़ी इससे आगे वार्ताओं के प्रचलन से ही कहानी विधा समाचारपत्रों और पत्रिकाओं' द्वारा लोकप्रिय हुई। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पंजाबी भाषा और इसके साहित्य का स्वरूप आज एकदम दूसरा ही होता यदि ईसाई मिशनरियों ने इसे अपने प्रचार योग्य न समझा होता। जब लेखक किसी गल्प साहित्य की रचना करता है तो उसमें किसी घटना का शत-प्रतिशत रूपांतरण नहीं होता और न ही वह रचना मात्र कल्पना के आधार पर रची जाती है अपितु लेखक अपनी रचना में यथार्थ और कल्पना का सुंदर मेल करता है। यहा यह उल्लेखनीय है

कि रचनाओं में कल्पना की उड़ान यथार्थ की सीमा का उल्लंघ नहीं कर सकती। लेखक की यह उड़ान गल्प का सत्य हो जाती है, जिसे कुछ आलोचक रचनात्मक यथार्थ भी कह लेते हैं। गल्प में मुख्य रूप से उपन्यास, कहानी, आदि विधाएँ आती हैं। इनमें लेखक गल्प का अँग्रेज़ी पर्याय 'फिक्शन' है। यह वस्तुत: लैटिन शब्द है जिसका अर्थ है- कल्पना शक्ति द्वारा किसी साहित्यिक कार्य का सृजन। संस्कृत शब्द गल्प जिसका पंजाबी रूप गप्प है, फिक्शन के अर्थो को ठीक तरह साकार करता प्रतीत होता है। इसलिए यह ठीक और उचित पद है। छोटी कहानी और मिन्नी कहानी लघुकथा कुछ घटनाओं और स्थितियों को नाटकीय ढंग से पात्रों की सहायता द्वारा इस प्रकार गूँथता है कि उसका एक ढाँचा आरंभ, मध्य और चरम सीमा पर अंत के रूप में खड़ा हो जाता है। परंतु यहाँ केवल छोटी कहानी के आरंभ के विषय में संक्षिप्त जानकारी देकर मिन्नी कहानी लघुकथा को अपने अध्ययन का विषय बनाया जाएगा। आइए, पहले कहानी क्या है इसके विषय में ध्यान दें। कहानी प्रत्येक स्थान पर विद्यमान होती है। चाहे प्राचीन जन्म-साखियों को पढ़ लीजिए, चाहे महाकाव्यों का अध्ययन कर लें, चाहे नाटक का आनंद लें, चाहे बाईबल अथवा क़ुरान शरीफ़ में दिए उदाहरणों, दृष्टांतों का विश्लेषण कर लें, कहानी का अस्तित्त्व प्रत्येक स्थान पर है। होमर की अमरकृति 'इलियड' ऐसी ही कहानी की नींव पर है। रामायण और महाभारत में क्या कहानियाँ नहीं हैं बेशक नाटक की उत्पत्ति की अन्य विधाओं से पहले हुई मानी जाती है परंतु मेहताब सिंह के अनुसार आदम की हव्वा के साथ पहली भेंट संसार की पहली कहानी है। मिथकों के अनुसार आदम को इस धरती का पहला पुरुष और हव्वा को पहली स्त्री स्वीकारा जाता है। जब यह दोनों एक-दूजे से पहली बार मिले होगे, तब उन्होंने एक-दूसरे को अपनी-अपनी कहानी आपबीती ही इशारों से समझाने का प्रयास किया होगा। इसलिए मैं मेहताब सिंह के उपर्युक्त कथन से सहमत होते हुए यह कहना पसंद करूँगा कि कहानी ने नाटक के माध्यम द्वारा साहित्य के अन्य सारे स्वरूपों से पूर्व जन्म लिया। अपने मत की पुष्टि के लिए मैं प्रो० गुरदयाल सिंह फुल्ल का यह कथन भी पाठकों के सम्मुख रखना चाहूँगा- "कहानी तब जन्मी थी जब अमीबा एक सेल वाली सजीव वस्तु कई पड़ाव लाँघता हुआ और विकास की मंजिलें चढ़ता हुआ डार्विन के सिद्धांतानुसार मानवी आकार तक पहुँचा था।" जैसा हमने ऊपर कहा था कि मनुष्य ने प्राकृतिक आपदाओं से भयभीत होकर उन शक्तियों की पूजा करनी आरंभ कर दी और तत्संबंधी अनेक काल्पनिक कहानियाँ घड़ लीं जिन्हें आज हम पौराणिक कथाएँ भी कहते हैं। इसलिए, इन कथाओं के नायक प्राय: देवी-देवता ही होते हैं। इस काल में मनुष्य ने सामूहिक रूप में रहने के कारण एक-दूसरे के अनुभवों से बहुत कुछ सीखा। उसमें कुछ समझ आई। उसका प्राकृतिक आपदाओं के प्रति भय कुछ कम हुआ और मनुष्य ने स्वयं को कहानियों में सम्मिलित कर लिया और मनुष्य स्वयं पात्रों के रूप में इनमें प्रस्तुत हुआ।

ये वही कहानियाँ है जो आधुनिक समाज में दंत-कथाओं के रूप में प्रचलित हैं। जैसे- गोरखनाथ मछंदरनाथ, पूरन भक्त आदि जोगियों की कथाएँ, गुग्गा पीर, हैदर शेख़, मलेरकोटला वाला पीर, हीर-रांझा, मिर्ज़ा साहिबा, सस्सी-पुन्नू आदि की कथाएँ। किसी विशेष स्थान पर जब कोई बड़ी घटना घटित होती है, तब जन-साधारण में प्रचलित हो जाती है। फिर व्यापारियों और पर्यटकों द्वारा यह घटना दूरदराज़ के देश-विदेश में भी कुछ-परिवर्तनों से प्रचलित हो जाती है। तब यह दंतकथा का रूप धारण कर लेती है। फिर यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रचलित हो जाती है। हजरत ईसा मसीह, हज़रत मुहम्मद साहब, महात्मा बुद्ध, महावीर, गुरुनानक देव जैसे पीर-पैगंबरों के साथ घटित छोटी-मोटी घटनाएँ इसी प्रकार प्रचलित हुई थी।

इसके अतिरिक्त डॉ. सतिंदर सिंह उप्पल भारतीय साहित्य में कहानी के प्रारंभ के विषय में कुछ इस तरह वर्णन करते हैं - एच. एल. हरयामा अनुसार ऋगवेद में मिलने वाली कथाएँ मनुष्यता की पहली दस्तावेज़ है। जातककथाएँ, हितोपदेश, पंचतंत्र, कथा सरित सागर आदि प्रारंभिक भारतीय रचनाएँ गल्प के रंग से भरी पड़ी है। मिस्र के विषय में कहा जाता है कि लगभग चार हज़ार ई.पू. चऊप के पुत्र अपने पिता के मनोरंजन के लिए कहानियाँ सुनाया करते थे। बेट्स के अनुसार कहानी सुनाने की प्रथा कविता से बहुत पहले आरंभ हो गई थी। जब आदिवासी जंगलों में आग के पास बैठकर इसका आनंद उठाते थे। दूसरी ध्यान रखने योग्य बात यह है कि भारत ही वह सौभाग्यशाली देश है जहाँ गल्प की रुचि सबसे पहले विकसित हुई, मैकडोनल के विचारानुसार कहानी गल्प भारतीय साहित्य का सबसे मौलिक विभाग है जिसने विदेशी साहित्य पर बहुत प्रभाव डाला है। रालिंसन भी पूर्व को पशु-पक्षियों की शिक्षाप्रद कहानियों का घर मानता है। पंजाबी साहित्य कोश का कथन कुछ इस प्रकार हैं, भारतीय साहित्य में ऋग्वेद में आए यम-यमी, पुरुरवा, आदि संवादों में, ब्राह्मणों में सौपर्णी-कार्दब जैसे- स्सात्मक व्याख्यानों में महाभारत की उपकथाओं और पुराणों की कथाओं में आधुनिक कहानी के अंश ढूँढ़े जा सकते हैं। राजाओं, राजकुमारों और पराक्रमी वीरों की घटना प्रधान कहानियों का विकास हमें बौद्ध जातक कथाओं के अतिरिक्त विष्णु शर्मा के 'पंचतंत्र' बुद्धस्वामी के 'बृहदकथा', श्लोक संग्रह, कश्यमेन्द्र की 'बृहदकथा मंजरी', सोमदेव की 'कथादि रत्नाकर' दंडी की 'दशकुमार चरित', बाणभट्ट की. 'कादम्बरी', सुबंधु की 'वासवदत्ता' और नारायण की 'हितोपदेश' में मिलता है।

पर हमारे उपर्युक्त अध्ययन अनुसार भारत में कहानी का आरंभ तो वेदों और उपनिषद ग्रंथों के लिखने से पहले माना जा चुका है। इन वेदों और ग्रंथों के अतिरिक्त महाभारत में जो कथाएँ हैं उनमें भी मनुष्य और पशुओं के परस्पर संबंधों के विषय में अत्यंत विस्तार से चर्चा की गई हैं। स्पष्ट है कि ये कथाएँ इन ग्रंथों में संकलित करने के लिए नहीं लिखी गई होंगी। इसलिए यह तो सिद्ध हो ही गया है कि कहानी का

जितना सुंदर रूप इन वैदिक ग्रंथों में है, वह धीरे-धीरे विकसित होकर ही इस स्थिति तक पहुँचकर ग्रंथों में संकलित करने के योग्य हो सका होगा।

प्राचीनकाल की मौखिक कहानी विशुद्ध कल्पना के सहारे और नैतिकता का आँचल कभी भी न छोड़ते हुए उपदेश प्रधान रचना होती थी। विशेषतः बुद्ध और जैन धर्म के उत्थान के समय कहानियाँ तो होती ही उपदेशों से भरपूर थीं। इन कहानियों में साहित्यिकता का अभाव होता था। इनमें मनुष्य एवं पशु दोनों प्रकार के पात्र हुआ करते थे। 'पंचतंत्र' की कहानियाँ इसी युग में लिखी गईं। फिर, जातककथाएँ और 'हितोपदेश' आदि का सृजन हुआ। उपर्युक्त काल की कहानियों की, स्वरूप की दृष्टि से आधुनिक कहानियों से तुलना नहीं की जा सकती पर फिर भी यह अवश्य माना जा सकता है कि आधुनिक कहानियों का गठन और संवादों की जो तकनीक आज मिली हुई है, वह प्राचीनकाल की कहानियों से ही प्राप्त है क्यों तब संवादों और कथानकों का विशेष ध्यान रखा जाता था। अतः कहा जा सकता कि भारतीय कहानी की विरासत अत्यंत समृद्ध है जिस भाति आधुनिक लेखक विश्व साहित्य पढ़कर उससे शक्ति एवं सोच ग्रहण करता है उसी भाँति आठवी-नौवीं शताब्दी में भारतीय कथाओं को पढ़कर अरब और यूरोप के लोग भी गर्व अनुभव करते थे। इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि आठवी-नौवीं शताब्दी के मध्य- काल में 'पंचतंत्र' की कहानियों का अनुवाद पचास से भी अधिक विदेशी भाषाओं में हुआ। जिसके परिणामस्वरूप 'अरेबियन नाइट्ज़' की अनेक कहानियों से भारतीय, कथाओं की समृद्ध परंपरा का प्रभाव पृथक् देखा जा सकता है। प्रत्येक युग का लोक-साहित्य उस युग के समाज और सभ्यता की सफल अभिव्यक्ति होता है। लोक-साहित्य ही सदैव विशिष्ट साहित्य का आधार बनता है। आधुनिक पंजाबी कहानी का आधार भी सदियों पूर्व प्रचलित उपर्युक्त मौखिक लोक गल्प-साहित्य ही है। प्रायः पुरातन जन्म-साखियों को पंजाबी में गल्प के पहले रूप में स्वीकृत कर लिया जाता है। वैसे औरों के अतिरिक्त साखी संख्या 'चार' और 'इक्कतीस' तो आधुनिक छोटी कहानी के बराबर कंधे-से-कंधा मिलाती दृष्टिगोचर होती हैं। परंतु यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो साखीकारों के अवचेतन मन में एकत्र हुए मिथक और पुराण-कथाओं का वह भंडार सहज ही खोजा जा सकता है जिससे बल प्राप्त कर उन्होंने साखियों का सृजन श्रद्धापूर्वक किया। मेरे उपर्युक्त विचारों को डॉ. सविंदर सिंह उप्पल के ये शब्द बल प्रदान करते हैं - "लोककथा एक अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक रूप है जो प्रत्येक देश के साहित्य के लिए नींव का कार्य करता आया है।" संसार-प्रसिद्ध साहित्यकार और आलोचक मैक्सिम गोर्की तो कला शब्द की उत्पत्ति भी लोकधारा से ही मानते हैं। शायद इसीलिए, डॉ. भूपिंदर सिंह खहिरा चिड़िया-कौवे के केंद्रीय विरोध पर आधारित कथा-समूह को विशुद्ध पंजाबी का पहला और प्राचीन कथा-समूह मानते हैं, जिसमें चिड़िया परिश्रमी और ईमानदार जनता की प्रतीक है और कौवा अमीर और शोषक वर्ग का प्रतीक।

प्राचीन समाज में प्रचलित मिथक और पुराण कथाएँ, प्रेत और परी कहानियाँ आधुनिक समाज के बालकों' में आज भी लोकप्रिय हैं। यही कहानियाँ मध्यकाल में क़िस्सा-काव्य-शैली जैसी विधा का आधार बनी और इनकी देखादेखी ही आधुनिक छोटी कहानी जैसी साहित्य विधा अस्तित्त्व में आई। इनके अतिरिक्त, जन्म-साखियों और सूफी-फ़क़ीरों के प्रसंगों से, पश्चिमी साहित्य और अन्य भारतीय भाषाओं उर्दू, हिंदी, बंगला आदि की कहानियों से भी नई कहानी ने बल प्राप्त किया। छोटी कहानी विश्व के किसी भी भाषा के साहित्य का अटूट अंग बन चुकी आधुनिक छोटी कहानी विश्व के किसी भी भाषा के साहित्य का अटूट अंग बन चुकी आधुनिक छोटी कहानी की उत्पत्ति अमेरिकन कहानीकार एडगर एलन पो की क़लम से हुई मानी जाती है। मुख्यत: अँग्रेज़ी शिक्षा और साहित्य के प्रभाव से ही इसने पंजाबी साहित्य में प्रवेश किया। पंजाबी में गद्य रूप में कथा उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व नहीं लिखी गई। डॉ. गुरचरन सिंह, अरशी ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि पंजाबी में मौलिक, विशुद्ध साहित्यिक (धार्मिक अथवा अनूदित नहीं) और आधुनिक छोटी कहानी लिखने के लिए पहल करने वाले ईसाई मिशनरी थे। जबकि पंजाबी में सर्वप्रथम कहानी 'लालसिंह कमला अकाली' द्वारा लिखित 'सरबलोह दी वहुटी' मानी जाती है। भाषा विभाग द्वारा प्रकाशित पंजाबी साहित्य के इतिहास में फतेह सिंह की पाँच संक्षिप्त वार्ताओं के संग्रहों 'आनंद प्रवाह' को पहला मौलिक कहानी-संग्रह माना गया है। डॉ. अरशी के उपर्युक्त निष्कर्ष का आधार ईसाई मिशनरियों की ओर से वर्ष 1836 से 1844 के मध्य प्रकाशित 'पीतल का नाग' (12 पृष्ठ), 'गंगा स्नान' (6 पृष्ठ), 'यात्रियों के नाम' (12 पृष्ठ), 'ग़रीब यूसुफ' (10 पृष्ठ), 'दो बूढ़े आदमी' (24 पृष्ठ) आदि शीर्षको के अंतर्गत पैंफलिट के रूप में प्रकाशित कहानियाँ हैं। आलोचक की यह भी धारणा कि पंजाबी में पहली मौलिक कथा रचना भाई वीर सिंह द्वारा वर्ष 1898 में रचित 'सुंदरी" है, परंतु डॉ. गुरचरण सिंह अरशी पंजाबी साहित्य के इतिहासकारों की इस धारणा को नकारते हुए यह सिद्ध करने का प्रयास करता है कि पंजाबी की पहली मौलिक कथा अनाम लेखक द्वारा वर्ष 1882 में लिखित उपन्यास 'ज्योतिरोदय' अर्थात् ज्योति का उदय होना है। डॉ. अरशी ने इसे किसी ईसाई मिशनरी द्वारा लिखी सिद्ध किया है जिसको काल्पनिक नाम ए.एल.उ.ई. द्वारा दर्शाया गया है। परंतु कहानी को पंजाबी साहित्य में ठोस आधार पर खड़ा करने वाले लेखकों में हम भाई वीरसिंह, भाई मोहन सिंह वैद, चरन सिंह शहीद, नानक सिंह, जोशुआ फज़लदीन, गुरबख्श सिंह प्रीतलड़ी आदि लेखकों के नाम ले सकते हैं। प्रो० गुरदयाल सिंह फुल्ल का छोटी कहानी में कथन कुछ इस प्रकार हैं - "कहानीकार कहानी का आरंभकर्ता नानक सिंह, कलात्मक और कुशल तथा नाटकीय कहानी का आरंभकर्ता संत सिंह सेखों, संवादात्मक कहानी का आरंभकर्ता- डॉ. मोहन सिंह दीवाना, प्रभाव की एकता की कहानी का आरंभकर्ता

करतार सिंह दुग्गल, ऋणात्मक सुझाव की कहानी का आरंभकर्ता कुलवंत सिंह विर्क।" प्रो० फुल्ल का यह विश्लेषण हमारी दृष्टि वैज्ञानिक तथा तथ्यों पर आधारित है। कुल मिलाकर, वर्ष 1947 तक की छोटी कहानी सुधारवादी और आदर्शवादी ही कही जा सकती है। वैसे भी "पंजाब की कथात्मक प्रतिमा को किसी सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा साँप्रदायिक मनोरथ की पूर्ति के लिए प्रयुक्त करती रही है।

जैसे हमने आरंभ में कहा था कि साहित्य में विषय और स्वरूप पक्ष पर बड़े परिवर्तन मुख्यरूप से सामाजिक जीवन में आए परिवर्तनों के कारण ही होते हैं। वस्तुत: समकालीन परिस्थितिम लेखक की विचारधारा को सीधे रूप से प्रभावित करती है। जैसे कबायली युग के मौखिक साहित्य में नायक देवी-देवते और पशु-पक्षी होते थे। तथा प्राकृतिक आपदाओं का उल्लेख सामान्य होता था। फिर जब राजा-महाराजों का दौर आया तो साहित्यिक रचनाओं में भी नायक के रूप में राजा-रानी, राजकुमार, परियों आदि का प्रवेश हो गया। फिर जागीरदारी जमींदारी युग के आरंभ के साथ साधारण मनुष्य का उल्लेख भी साहित्यिक पात्रों के रूप में हो गया और उसने नायक के रूप में स्थान ले-लिया। चमत्कारिक करिश्मों का अंत हो गया और यथार्थवादी घटनाओं का वर्णन ही कहानियों, क़िस्सा-काव्य साहित्य में होने लगा। इससे आगे राजसी सम्मान और मूल्यों की टूटन से पूँजीवादी निजाम का आगमन आवश्यक था। इसके आगमन से वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रशंसनीय प्रगति हुई। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाने लगा। औद्योगिक विकास के साथ मानवीय जीवन उलझावपूर्ण हो गया और अनेक छोटी-बड़ी नई समस्याओं और छोटी-छोटी घटनाओं का साहित्य में चित्रण करने के लिए छोटी कहानी की परंपरा चली। इस प्रकार कहा जा सकता है कि औधोगिक क्रांति ने आधुनिक छोटी कोशलपूर्ण कहानी को जन्म दिया। फिर व्यस्तताएं बढ़ने के कारण समयाभाव के कारण और साधारण मनुष्य की दृष्टि की प्रधानता में वृद्धि के कारण छोटी कहानी ने स्वयं को और भी सुधरे सुधरे रूप में मिन्नी कहानी (लघुकथा) में ढाल लिया।

कभी समय होता था जब कहा जाता था कि जिसे हम आज बोएँगे उसे ही हमारे पोते खाएँगे और जो हम आज खा रहे हैं वह हमारे दादे का बोया हुआ था। पर, आजकल बात बिल्कुल उलट गई है। जीवन की तीव्रता एवं कंप्यूटरीकरण ने जीवन की गति को ऐसे स्थान पर ला खड़ा किया है, जहाँ जो बोएगा वही उसका फल खाएगा। भाव यह है कि युग परिश्रम का है, चुनौती का है। श्रम करेंगे तो फल मिलेगा नहीं तो...। इस श्रम-युग में किसी के पास अवकाश नहीं है। लंबी कथाओं, बातों को पढ़ने-सुनने का। तो उस बुद्धि की आवश्यकता है, उस कलात्मकता की आवश्यकता है जो कुल्हड़ में समुद्र बंद करने की क्षमता रखती हो। ऐसे युग में केवल इसी ढंग से स्वयं प्रगतिशील विचारों को जन-साधारण तक पहुँचाया जा सकता है और यही आधुनिकता है। डॉ. सविंदर

सिंह उप्पल ने छोटी या संक्षिप्त वस्तुओं की ओर जन-साधारण के झुकाव को दर्शाने के लिए तर्क दिया है, "जहाँ स्त्रियाँ पहले बड़ी-बड़ी ओढ़नियाँ लेती थीं, अब उनका स्थान छोटी-छोटी छटांकभर की ओढ़नी ने ले-लिया है। जहाँ पहले लोगों का जीवन सौ-सौ वर्ष का होता था और वे तब भी वृद्ध भी बूढ़े नहीं लगते थे, वहीं आज तीस वर्ष के युवा के बाल सफ़ेद हो जाते हैं और उसे टानिक लेने की आवश्यकता होने लगती है। जीवन की लघुता का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा है।"

दिन-प्रतिदिन बढ़ती भाग-दौड़, शिक्षा के प्रसार के बावजूद बेरोज़गारी में वृद्धि, आवश्यकता की वस्तुओं की प्राप्ति के लिए लंबी-लंबी पंक्तियों में लगना, दिन-प्रतिदिन बढ़ती मंहगाई, अन्न का अभाव, नैतिक मूल्यों में कमी, सन् 62 में चीनी और सन् 65 में पाकिस्तानी युद्धों के कारण स्वतंत्रता के पश्चात्, विशेषतया वर्ष 1960 के पश्चात् ऐसा समय आता जा रहा है जब मनुष्य अलगाव का शिकार होता जा रहा है। उसे लगता है, मानो उसके अतिरिक्त सभी स्वार्थों में बँधे हैं। उसका अपना कोई नहीं है। वह अकेला ही संसार में आया है और अकेला ही जाएगा। ऐसा सोचते हुए चाहे वह स्वयं टेढ़े-मेढ़े ढंग से स्वाथों का दास होता है। परंतु इस अनुभवयोग्य वैयक्तिकता ने उसे स्वयं के विषय में चिंतन के लिए विवश कर दिया है। का विश्लेषण करते हुए अधिक सूक्ष्मतापूर्वक ऐसे छोटी-छोटी बातों, घटनाओं को खोज लेता है जिसे पहले वह निरर्थक समझकर छोड़ चुका होता है। इन परिवर्तित परिस्थितियों के प्रभाव में लेखक भी उन लघु क्षणों को अपनी लेखनी के साथ काग़ज के कैनवस पर उतारने लगता है। इस प्रकार आधुनिक युग में मानव-मन की प्रमुखता बहुत बढ़ गई है। मनुष्य के स्थूल कार्यों का कोई महत्त्व नहीं रह गया है। अवचेतन मन को त्यागकर मनुष्य के अर्द्धचेतन एवं अवचेतन मन की पर्तें खोलने के प्रयास जा रहे हैं। मनुष्य के जीवन के नन्हे-नन्हे क्षणों का मूल्य पड़ गया है। किसी व्यक्ति द्वारा कहे एक शब्द की सहायता के साथ ही उसके मन तक पहुँचने का प्रयास किया जा रहा है। उसके द्वारा किए किसी भी कार्य को भिन्न-भिन्न ढंगों से भिन्न-भिन्न अर्थ दिए जा रहे हैं। इससे संबंधित डॉ. रतन सिंह जग्गी के ये विचार चिंतनीय हैं- "...तकनीकी विकास के साथ मनुष्य के जीवन की यात्रा वर्षों, महीनों, दिनों, घंटों से क्षणों की ओर होती जा रही है और मनुष्य के जीवन में क्षणों का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। ये क्षण जितने और लघु होते जा रहे हैं, उतनी ही छोटी कहानी और छोटी होती जा रही हैं और मिन्नी कहानी (लघुकथा) इस संकुचित-प्रक्रिया की नवीनतम उपलब्धि है। समाचारपत्र-पत्रिकाओं की आवश्यकता ने इसके विकसित होने में, साधन के रूप में, भूमिका निभाई है।"

आधुनिक पूँजीवादी युग का मनुष्य टुकड़ों में अपना जीवन व्यतीत करते हुए समय-सारिणी के अनुसार ही कार्य करता है। वह निश्चित समय पर भोजन करता है, कार्य करता है, मित्रों से मिलता है, बच्चों के संग खेलता है, पढ़ता है, कुछ लिखता है। समय कम

होता है और कार्य अनेक होते हैं। इसलिए वह कार्यों के लिए बहुत कम समय निकाल पाता है। इसलिए ऐसे मनुष्य के अनुभव भी टुकड़ों में विकसित होते हैं। ऐसे विभक्त अनुभवों को साहित्य में मिन्नी कहानी (लघुकथा) जैसी विधा द्वारा ही सफल साहित्य, के रूप में पहचाना जा सकता है। दूसरे, शिक्षा के जन-साधारण में प्रसार से मानवीय बुद्धि पहले से अधिक वैज्ञानिक, व्यावहारिक, बौद्धिक और सूक्ष्म हो गई है। मनुष्य अब किसी भी परिस्थिति का विश्लेषण सुगमता और सूक्ष्मता से कर लेता है। उसके सूक्ष्म अध्ययन और सूक्ष्म दृष्टि के कारण ही साहित्य में मिन्नी कहानी जैसे सूक्ष्म रूप का प्रचलन आवश्यक था।

समकालीन धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सभ्याचारक और राजनीतिक परिस्थितियाँ साहित्य पर अपना विशेष प्रभाव छोड़ती हैं। उपर्युक्त परिस्थितियों का संबंध क्योकि जन-साधारण के साथ सीधे होता है, इसलिए इनमें किसी प्रकार का परि- वर्तन लोगों की मानसिकता को भी अपने ढंग से परिवर्तित कर देता है। अब साहित्य का सीधा संबंध मनुष्य की मानसिकता के साथ ही है। इसलिए कभी अंग्रेजों के ईसाई धर्म के प्रचार अभियान की तीव्रता के कारण धार्मिक सुधारवादी लहर का साहित्य में ज़ोर था, कभी नानक सिंह जैसे लेखक आदर्शवादी सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाना अपना कर्तव्य समझते थे, कभी समाजवादी यथार्थवाद का ज़ोर था और कभी संघर्षशील चिंतन का, कभी प्रयोगवाद ने जन्म लिया और कभी अस्तित्ववाद ने साहित्य पर भारी पड़ना चाहा। इसी प्रकार जब मानसिकता समय की कमी के कारण अनेक भागों में बँट गई, तब लेखकों को मिन्नी कहानी लघुकथा की ओर रुचि लेनी पड़ी। कम-से-कम समय में अधिक से अधिक रसास्वादन, हेतु पाठकवर्ग भी इस ओर झुका। वैसे भी जब किसी मित्र का पत्र बहुत समय के पश्चात् मिलता है तो उसमें पत्रोत्तर शीघ्र न देने के लिए केवल एकमात्र तर्क लिखा होता है कि व्यस्तता के कारण उत्तर शीघ्र न दे सका। व्यस्त था - चाहते हुए भी समय न निकाल सका, आदि- आदि। सचमुच मनुष्य ने अपनी व्यस्तता बहुत बढ़ा ली है। कम समय में अधिक से अधिक कार्य निपटाने के प्रयास किए जाते हैं। यह तो हम लेखक लोग ही हैं, जो एक ही पुस्तक को परिश्रमपूर्वक अधिक-से-अधिक समय लगाकर लिखने का प्रयास करते हैं। दिनों, महीनों की यात्रा अब घंटों में पूरी कर ली जाती है। जीवन के कारण ही छोटी कहानी की उत्पत्ति हुई थी। और अब आ जाने के कारण ही मिन्नी कहानी (लघुकथा) ने साहित्य में अपना लिया है। यह कहा जा सकता है, इस जेट युग में साहित्य-रस को लिए ही लेखकों ने मिन्नी कहानी लिखनी आरंभ की। डॉ. अमर कोमल के अनुसार, मिन्नी कहानी का जन्म पंजाबी के उन कहानीकारों की क़लम से होता है जो नई सामाजिक स्थिति में पलकर बड़े हुए हैं, जिन्होंने वर्तमान जीवन-समस्याओं, परिवर्तित हो रही तनाव प्रधान मानसिकता, हीनभावना, सामाजिक अन्याय, वर्तमान समाज में पल रहे भावविहीन

मशीनी, पत्थर-हृदयी मनुष्य को जीवन व्यतीत करते देखा है। आप उस अवस्था में ही विचरण करता है। जागते और जीते अनुभव भोगता है। इस प्रकार पंजाबी कहानी में जहाँ नए झुकाव प्रस्तुत होने लगे, वहीं मिन्नी कहानी ने भी जन्म लिया है।

सुरिंदर कैले (संपादक-अणु) का विचार मिन्नी साहित्य के विषय में कुछ इस प्रकार हैं, "एक छोटा-सा करंट जब लेखक के मस्तिष्क की तरंगों को स्पर्श करता है, तब वह झुँझला उठता है और उसकी वही झुँझलाहट किसी रचना का रूप धारण कर लेती है। मिन्नी साहित्य छोटे-से करंट की अभिव्यक्ति होता है, जिसको उस करंट जितने समय में ही लिपिबद्ध कर लिया जाता है।

दैनिक समाचारपत्रों के प्रसारण के कारण, अनेक छोटी-बड़ी त्रैमासिक, मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक पत्रिकाओं और पत्रों आदि के आरंभ हो जाने से भी मिन्नी कहानी लघुकथा की उत्पत्ति मानी जा सकती है। बेशक, हम मिन्नी कहानी (लघुकथा) जैसी काफ़ी सामग्री, भाव, बात को संक्षिप्त-से-संक्षिप्त रूप में कहने की रुचि कविता और वार्तालापात्मक दोहों में, पंजाबी लोक एवं विशिष्ट साहित्य, मौखिक एवं लिखित साहित्य में श्लोकों, पहेलियों, कहावतों, चुटकलों, रासों के मजाकों, पुराण-कथाओं, दैत्य और परी कथाओं पर परी-कथाथाओं यादि के रूप में प्रारंभ से ही देखते हैं, परंतु, आधुनिक मिन्नी कहानी (लघुकथा) का पंजाबी साहित्य में प्रचलन नियमित ढंग से सन् 1960 के पश्चात् प्रयोगशील लहर के आने से देखा जा सकता है जब मानव-जीवन के छोटे-से-छोटे क्षण का महत्त्व पड़ा और उस क्षण को आलोचनात्मक, विश्लेषणात्मक और सूक्ष्म से सूक्ष्म दृष्टिकोण से विश्लेषण एवं परीक्षण की आवश्यकता पड़ी। प्रयोगशील चेतना का एक बड़ा हथियार व्यंग्य है। हम देखते ही है कि मिन्नी कहानी में भी मनुष्य के दैनिक जीवन में से कोई विशेष क्षण छाँटकर ऐसे ढंग से प्रस्तुत किए जाते हैं कि उसमें व्यंग्य के स्वर की प्रधानता रहती है। नवीनता अथवा प्रयोग के नाम पर मिन्नी कहानी (लघुकथा) संबंधी हमें कदापि यह धारणा नहीं बना लेनी चाहिए कि मिन्नी कहानी आकाश से टपकी है अथवा दूसरे शब्दों में साहित्य में इस विधा की उत्पत्ति प्रयोगशील लहर के आरंभ होने के साथ ही हो गई थी बल्कि इसके बीज तो पंजाबी साहित्य की समृद्ध परंपरा की कोख में विद्यमान हैं। हमारी उपर्युक्त धारणा को डॉ. अतर सिंह के ये शब्द बल देते हैं, "प्रयोग नित्य परिवर्तित जीवन की माँगों के अनुसार परंपरा को ढालने की चेष्टा में से उत्पन्न हाता है... प्रयोग केवल उस सीमा तक प्रयोग है, जहाँ तक वह परंपरा को सजीव रख सकता है, गतिमान रख सकता है।"

चाहे हमें आधुनिक मिन्नी कहानी को प्रयोगवादी लहर से उत्पन्न बताया गया है, पर यह प्रयोगवादी लहर की भाँति कभी भी प्रगतिवादी विचारधारा के विपरीत नहीं खड़ी हुई, इसका स्वर आरंभ से ही जनवादी रहा है। प्रयोगवाद की समाप्ति हो गई है परंतु उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई आधुनिक मिन्नी कहानी (लघुकथा) अभी भी

अपनी पूरी शान से विद्यमान है। प्रयोगवाद की एक ऐसी दियासलाई के साथ सहज ही तुलना की जा सकती है जो मिन्नी कहानी (लघुकथा) जैसे दीपक को प्रकाश प्रदान कर स्वयं बुझ गई हो। अलग-अलग पंजाबी लेखकों ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार इस दीपक में तेल डाला है और डाल रहे हैं, चाहे समय-समय पर कुछ स्थापित लेखक और आलोचक इसे बुझाने को प्रयासरत रहे हैं। परंतु, अब नई पीढ़ी के लेखकों ने इस दीपक के चारों ओर अपना घेरा काफ़ी मज़बूत कर लिया है और इसकी लौ को सदा प्रज्वलित रखने के लिए अपनी पूरी क्षमता से प्रयत्नशील हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विचार-चर्चा का सार यह है कि मिन्नी कहानी (लघुकथा) का प्रचलन उसी दिन हो गया था जिस दिन मनुष्य ने विधिवत बोलना सीखा पर, कथा की यह विधा अपने आधुनिक रूप में तभी विकसित हुई जब पूँजीवादी युग के आगमन से विज्ञान ने इस संसार पर अपनी जकड़ मज़बूत करनी आरंभ की।

मिन्नी कहानी (लघुकथा) समय की आवश्यकता से उपजी है इस तथ्य को मैं एक उदाहरण से सिद्ध करने का प्रयास कर रहा हूँ। एक देश को ऐसे जेट वायुयान की आवश्यकता थी जो राडार की पकड़ में न आ सके। आवश्यकता आविष्कार की जननी है- कहावत के अनुसार उस देश ने समय पूर्व ऐसा वायुयान तैयार कर ही लिया। परंतु, अब उसके पड़ोसी देश को इस आविष्कार से चिंता अवश्य होगी। राडार से कुछ किरण निरंतर अलग-अलग दिशाओं में फैलती रहती हैं। जब उस रात. के क्षेत्र में कोई वायुयान प्रवेश करता है तो वे किरणें उस वायुयान की धातु से टकराकर राडार की और वापस मुड़ती है जिससे अपरिचित वायुयान की उपस्थिति का पता लगता है। परंतु, इस नए तैयार किए वायुयान की धातु से टकराकर राडार की किरण परिवर्तित होने के स्थान पर उसी में विलीन हो जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप वायुयान के आगमन का पता नहीं लगता। मुझे विश्वास है कि दूसरा पड़ोसी देश उपर्युक्त कहावत अनुसार ऐसे राडार का आविष्कार अवश्य कर लेगा जो इस नए वायुयान को भी अपने घेरे में ले जाएगा। इसी प्रकार जब मनुष्य के पास समयाभाव हुआ तो उपर्युक्त कहावत अनुसार उसने अपनी साहित्यिक रुचि को बनाए रखने के लिए, अपनी मानसिक उत्सुकता को शांत करने के लिए और कथात्मक रुचि को बनाए रखने के लिए मिन्नी कहानी लघुकथा का सृजन कर लिया। हम यह तो जानते ही हैं कि साहित्य संस्कृति की अभिव्यक्ति है। मानव-जीवन के अनुभवों के लिए सामाजिक रीतियां और सामाजिक वातावरण को जानना आवश्यक है। वही लेखक सफल कहा जा सकता है जो इस वातावरण को और इसमें विकसित हुई मानवी चेतना को सही-सही और उचित ढंग से अपनी कृतियों में दर्शा सकता हो। इसीलिए, एक समझदार आलोचक सदा साहित्य में लेखक की प्रकट की गई धारणाओं की तह तक पहुँचने के लिए साहित्य की उस विशेष विधा को उस विशेष काल, संस्कृति, धर्म और प्रदेश के संदर्भ में पहचानता

है और जिसमें वह विधा उपजी और विकसित हुई है, उसकी जाँच-पड़ताल करता है। अब जबकि तीव्रता का युग है और एक से दूसरे स्थान की दूरी सेकेंडों, मिनिटों में नापी जाने लगी है इसलिए ऐसे समय में ही मिन्नी कहानी (लघुकथा) की उत्पत्ति संभव थी। इसलिए जब भी मिन्नी कहानी (लघुकथा) की बात होती है तो कम समय और तीव्र गति का उल्लेख स्वयं आ जाता है। समयाभाव एवं तीव्र गति के कारण हमें निश्चित रूप में आधुनिक संस्कृति का साहित्यिक शाब्दिक निर्माण मिन्नी कहानी (लघुकथा) में ही निहित मानने में बिल्कुल संकोच नहीं करना चाहिए क्योंकि तीव्रगामी मानव की मानसिक संतुष्टि यह सफलतापूर्वक करती है।

डॉ. रघबीर सिंह के अनुसार- "किसी भी विचारधारा की भाँति कोई भी साहित्यिक रूप भौतिक परिस्थितियों अथवा निश्चित सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समाचारों की उपज होता है। एकाध व्यक्तिगत प्रयास न तो किसी विचार को ही जन्म दे सकते हैं, न ही कला या साहित्य के किसी रूप को ही। नि:संदेह, व्यक्तियों द्वारा ही इनका उदय होता है परंतु वास्तव में व्यक्ति भी प्राप्त समाचारों की अनिवार्यता को ही प्रकट कर रहे होते हैं।" डॉ. रघबीर सिंह के इस कथन से मेरे उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि हो जाती है कि मिन्नी कहानी (लघुकथा) की उत्पत्ति समय की आवश्यकता में से ही स्वयमेव हुई। इससे संबंधित बोरिस सचकोव का यह तर्क भी प्रस्तुत किया जा सकता है- "साहित्य के रूप और वस्तु में कोई भी बड़ा परिवर्तन सामाजिक जीवन में आए परिवर्तनों द्वारा ही निश्चित होता है।" साहित्य की किसी भी विधा की उत्पत्ति किसी लेखक विशेष की देन नहीं कही जा सकती। विधाओं का आरंभ और अंत दोनों लंबी प्रक्रिआएँ हैं। साहित्य की प्रत्येक विधा निरंतर विकास करती हुई परिवर्तनशील रहती है परंतु हम उसकी गतिशीलता को प्रथम दृष्टि में ही अनुभव नहीं कर सकते। साहित्य का प्रत्येक रूप तो घड़ी की सुइयों के समान होता है, जो तेज़ी से आगे बढ़ रही होती हैं परंतु, हममें से कोई भी उनकी गति को अनुभव नहीं कर सकता। हम भाषा का उदाहरण ले सकते हैं - भाषा का आरंभ किस मनुष्य ने किया, किसी को नहीं पता। यह तो प्राचीन समय में मानव समाज द्वारा एक व्यक्ति के विचारों और भावों को दूसरे व्यक्ति तक संप्रेषित करने के लिए आविष्कृत किया गया ध्वन्यात्मक सामूहिक प्रयत्न आरंभ में प्रत्येक व्यक्ति का भाषा के विकास में थोड़ा-बहुत योगदान रहा होगा। प्रत्येक व्यक्ति ने शब्दों को अपनी समझ, अपनी सूझ के अनुसार ढाला होगा और प्रत्येक अच्छा लगता शब्द समाज ने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया होगा। इसी प्रकार भाषा निरंतर अदृश्य ढंग से विकास करती हुई बिल्कुल आविष्कार धारण कर और युगबोध की पहचान बनकर हमारे सामने प्रस्तुत है। इसी प्रकार हम मिन्नी कहानी (लघुकथाएँ) की उत्पत्ति के विषय में कह सकते हैं। आधुनिक छोटी और मिन्नी कहानी के बीज ईसाई मिशनरियों ने पहली बार पंजाबी में बिखेरे। चाहे यह अनूदित रूप में ही सही (कुछेक मौलिक भी थे) परंतु, यह हमारे

पंजाबी लेखकों के लिए प्रेरणा-स्रोत तो बने ही। फिर चाहे मिन्नी कहानी (लघुकथा) का पंजाबी साहित्य में तब नामो-निशान भी नहीं था जब गुरबख्श सिंह अपनी मासिक पत्रिका 'प्रीतलड़ी' में अपने छोटे-छोटे परंतु रोचक संस्मरण प्रकाशित करते थे जो बिल्कुल आधुनिक मिन्नी कहानी लघुकथा (मिन्नी कहानी) लघुकथा जैसे स्वरूप वाले थे। परंतु, पंजाबी साहित्य में औपचारिक रूप से मिन्नी कहानी (लघुकथा) का आगमन प्रयोगवादी लहर के आरंभ के साथ होता है। आधुनिक काल में भी लगभग प्रत्येक बड़े और छोटे लेखक ने मिन्नी कहानी (लघुकथा) पर हाथ अवश्य आज़माया है। उपर्युक्त विचार चर्चा का सार यह है कि पंजाबी में मिन्नी कहानी (लघुकथा) का आरंभ किसने किया, यह एक समस्या है परंतु इसकी खोज अवश्य ही की जानी चाहिए। संग्रह रूप में मिन्नी कहानियों को पहली बार पंजाबी साहित्य में भेंट करने का सेहरा सतवंत कैथ को जाता है जिसका प्रथम मिन्नी कहानी संग्रह अक्तूबर-1972 में प्रकाशित हुआ। परंतु, प्रसिद्ध पंजाबी कहानीकार गुरमेल मडाहड़ का मिन्नी कहानी (लघुकथा) संबंधी कथन कुछ इस प्रकार है- "पंजाबी में आधुनिक मिन्नी कहानी का स्वरूप प्रोफ़ेसर तेजवंत मान की सन् 1968 में 'आरसी' में प्रकाशित कहानी 'लाश' के रूप में पाठकों के समक्ष उजागर हुआ था परंतु किसी ने स्पष्ट रूप से प्रतिबद्ध होकर इस विधा को अपनाया नहीं था। भूपिंदर सिंह, पी.सी.एस. ने सर्वप्रथम 'सौ पत्त मछली दे' (सन् 1979) मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित कराकर न केवल पहल ही की अपितु मिन्नी कहानी का एक पड़ाव निश्चित करके पंजाबी मिन्नी कहानी जगत् पर छा गए। प्रसिद्ध अनुवादक और लेखक प्रो० अशोक भाटिया पंजाबी मिन्नी कहानी का जन्म वर्ष 1950 में हुआ बताते हुए वर्ष 1970 से इसे एक सामूहिक आंदोलन के रूप में उभरता बताते हैं। प्रो० सुलक्खण मीत और प्रो० हमदर्दवीर नौशहरवी इसकी उत्पत्ति वर्ष 1962 से मानते हैं। डॉ. अमर कोमल ने सन् 1970 के बाद पंजाबी मिन्नी कहानी को अकहानी, प्रतीकात्मक दस्तावेज़ी फैंटेसी और रिपोर्ताज की तरह की कहानियों से उत्पन्न माना है। मिन्नी कहानी (लघुकथा) की उत्पत्ति के लिए प्रायः एकमात्र तर्क ही अधिकांशतः दिया जाता है कि यह विधा समय की कमी के कारण अस्तित्त्व में आई। परंतु, क्या इसी समय के अभाव वाले युग में बड़ी कहानियाँ और उपन्यास प्रकाशित नहीं होते? क्या पाठक इन्हें रुचि से नहीं पढ़ते? वस्तुतः साहित्य का प्रत्येक रूप अपने दृष्टिकोण एवं जीवन के विभिन्न पक्षों को अन्य रूपों के मुक़ाबले अधिक अच्छे ढंग से प्रस्तुत करता है। कई बार मिन्नी कहानी को इसलिए नीचा दिखाया जाता है क्योंकि एक तो अब तक इसे मात्र चुटकुला समझा गया है और दूसरे इसके लघु आकार पर भी अनेक प्रहार किए गए हैं कि इसमें लेखक अपने विचारों को खुलकर प्रस्तुत नहीं कर सकता। जिस प्रकार कविता मानवीय भावों को अभिव्यक्त करती है, नाटक जीवन के विस्तृत स्वरूप को अपने कलेवर में प्रस्तुत करता है, चाहे अंत में इस विशालता

को अत्यंत सरलतापूर्वक समेटने का प्रयास करता है, छोटी कहानी जीवन को कई खंडों-उपखंडों में प्रस्तुत करती है। मिन्नी कहानी (लघुकथा) भी जीवन के ऐसे छोटे-से-छोटे क्षण को पकड़ने की शक्ति रखती है जिसे साहित्य का कोई भी अन्य रूप प्रस्तुत करने में असमर्थ है। क्या हम अपने जीवन के लघु-से-लघु क्षण को यूँ ही खोना पसंद करेंगे? हरगिज़ नहीं। क्या लघु क्षणों का कोई महत्त्व नहीं? मिन्नी कहानी (लघुकथा) के मुक़ाबले में कथा की ही एक महत्त्वपूर्ण विधा उपन्यास है। उपन्यास चाहे जीवन की समग्रता को अपने आपमें समेटने का दावा करता है परंतु अनेक लघु पर अहं क्षणों को इसमें प्रस्तुत करने से बचा जाता है, इन्हें व्यर्थ समझा जाता है। ऐसे क्षणों को उपन्यास में प्रस्तुत किया ही नहीं जा सकता- चाहे इसे उपन्यास की विवशता समझ लें। कुछ ऐसे तथाकथित व्यर्थ और लघुक्षणों की कलात्मक अभिव्यक्ति का स्वरूप ही तो मिन्नी कहानी (लघुकथा) है। उदाहरणतया मान लें, एक सड़क पर कोई दुर्घटना हो गई है, आसपास भीड़ एकत्र हो गई है। इस दुर्घटना के विषय में सभी लोगों की प्रतिक्रियाओं का वर्णन सामूहिक रूप में उपन्यास के एक अध्याय का भाग तो बन सकता है परंतु इसमें सभी व्यक्तियों की अलग-अलग प्रतिक्रियाओं का स्वतंत्र रूप में आलोचनात्मक विश्लेषण नहीं किया जा सकता। यदि उपन्यासकार की ओर से ऐसा किया भी गया तो उसकी रचना अपने मुख्य उद्देश्य से हटकर भटक जाएगी। चाहे उपर्युक्त भीड़ के लोग एक ही समाज से संबंधित हैं, परंतु प्रत्येक की मानसिकता भिन्न-भिन्न है। इसलिए, यहाँ प्रत्येक व्यक्ति की मानसिकता को आधार बनाकर उतनी मिन्नी कहानियाँ (लघुकथाएँ) लिखीं जा सकती हैं जितने व्यक्ति भीड़ में हैं। यदि प्रत्येक व्यक्ति की मानसिकता को गहराई से जाँचा-परखा जाए तो हमें यहा यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि भीड़ के अलग-अलग व्यक्तियों की उस दुर्घटना के प्रति मानसिक स्थिति उस समाज के भिन्न-भिन्न पक्षों को उपन्यास से अधिक सफलतापूर्वक अभिव्यक्त करने में सहायक होगी। उनकी प्रतिक्रियाओं से ही हम उस समाज के सभी पक्षों के रहन-सहन, संस्कृति, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक आदि महत्त्वपूर्ण तत्त्वों का अध्ययन भली-भाँति कर सकते हैं। इसलिए, यह बात अब निश्चित रूप से कही जा सकती है कि कथा की मिन्नी कहानी (लघुकथा) जैसी लघुरूप की विधा भी मानवजीवन की समग्रता को स्वयं में समेट सकती है और इसमें सामाजिक चेतनता का समावेश हो सकता है। अब हम समस्त विचार-चर्चा के उपरांत मिन्नी कहानी (लघुकथा) की परिभाषा देने योग्य हो गए हैं। मिन्नी कहानी कथा की वह विधा है जिसे पढ़ने के लिए किसी विशेष समय की आवश्यकता न हो, परंतु इसे पढ़ने के उपरांत पाठक काफ़ी समय के लिए कुछ सोचने के लिए विवश हो जाए। जिसके वर्णन ने अधिक स्थान न घेरा हो, पर जब उसकी आलोचना करने लगे तो उसे काफ़ी कुछ उसके कथ्य को समझाने के लिए लिखना पड़ जाए, जिसमें मानव जीवन के किसी एक पक्ष के किसी एक क्षण को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया

गया हो, जिसमें साधारण-से-साधारण घटना का अलग महत्त्व दृष्टिगोचर होने लगे। प्रत्येक भाषा में किसी भी साहित्यिक रूप का मिन्नी (लघु) रूप किसी-न-किसी रूप में विद्यमान है। मोटे-मोटे उदाहरणों के लिए अँग्रेज़ी के लिरिकल एस्सेज़, हिंदी के ललित निबंध, लघुकथा, श्लोक, उर्दू में इंसाफिया, अफ़साना, शेर आदि विचारणीय हैं।

(पंजाबी से अनुवादः अशोक लव)

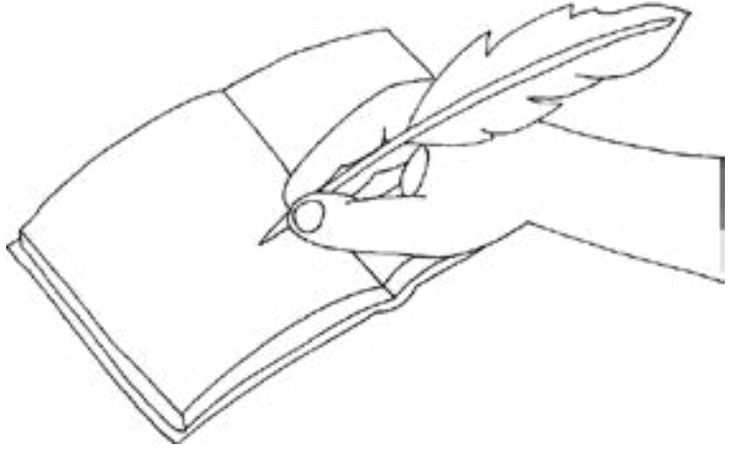

पंजाबी-लघुकथा: प्राप्तियाँ और संभावनाएँ

डा. अमर कोमल

आज के विज्ञान और तकनालोजी के युग में, समय-रफ़्तार और संचार-साधनों के कारण, यह संसार भी सीमित स्थान बन गया है। मानव ने मशीन की खोज करके, यद को एक मशीन की तरह बना लिया है। जिससे मानव के सोचने की प्रक्रिया, उसकी रुचिया, प्रवृत्ति और उसकी मानसिकता बदल गई है। सकारात्मक शक्ति के साथ-साथ, मानव की नकारात्मक शक्ति भी प्रबल है। दोनों शक्तियों की टक्कर का प्रभाव, समय की संस्कृति और उसके मूल्यों के साथ-साथ हमारे साहित्य के ऊपर भी पड़ता है। यह भी सच है कि आदिकाल से प्रगति के साथ-साथ विनाश-लीला भी हो रही है। जिससे मानव के दिलोदिमाग़ में मृत्यु का भय है, जिससे अस्थिरता है, बेचैनी है और घबराहट है।आधुनिक मशीनी युग में तेज़ी से हो रहे परिवर्तनों, आविष्कारों, अणु-विस्फोटों, तकनीकी उन्नति की हैरान करने वाली प्राप्तियों ने मानव की आंतरिक मानसिक और बाहरी सामाजिक व्यवस्था में हलचल पैदा कर दी है। आज हालत यह है कि पृथ्वी का शक्तिशाली जीव मानव, उसको भविष्य का अँधेरा डरा रहा है। वह अपने आसपास के, स्वयं ही बनाए हुए ग़लत निजाम, ग़लत राजनीति, ग़लत न्याय, ग़लत पूँजी- विभाजन के प्रकोप के कारण, अपने आपको ही लघु व्यक्ति समझने लगा है। उसकी समझ में नहीं आ रहा कि उसके आगे जो कुछ हो रहा है, क्या है, क्यों है, और कैसे है। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में मानव की विचारधारा, सामाजिक, आर्थिक भाईचारे के सभ्याचारक रूप बदले हैं। आपसी रिश्तों में बिखराव आया है। महानगरों, शहरों की भयंकर मारक सामाजिक अवस्था का प्रभाव दूरदराज़ के गाँवों के लोगों के ऊपर भी पड़ रहा है। इस सामाजिक उथल-पुथल में अपने अस्तित्त्व के लिए हर कोई संघर्ष करता है। प्रत्येक अपने हितों के लिए लड़ता है। लोगों के पास न तो समय है, और न ही चैन,न ही उनके पास अपनी सुरक्षा की गारंटी और आत्मसंतुष्टि है। फिर भी, वह अपने तन मन की ज़रूरतों की इच्छा तो करते ही हैं। जहाँ, उनके लिए तन की ज़रूरतें पूरी करने हेतु रोटी, कपड़ा और मकान तथा सामाजिक प्राप्तियाँ - रोज़गार, आर्थिक ख़ुशहाली, सामाजिक सम्मान की ज़रूरत है, वहीं उसको अपने मन की तृप्ति के लिए ललित कलाओं, साहित्य व संगीत की भी ज़रूरत है। मानव मन की तृप्ति के लिए कला के भिन्न-

भिन्न रूप और साहित्य सामग्री का प्रयोग, सार्थक सिद्ध होते हैं। इसीलिए, हम साहित्य की ओर आकर्षित होते हैं। साहित्य तभी तो मानवीय आकांक्षा का अंग बनता है।

आधुनिक समय का मानव, टूट रहे आपसी संबंधों, सामंतवाद द्वारा स्थापित कारण पैदा हो रहे दुखांत से भी मुक्ति प्राप्त करना चाहता है, साथ ही, वह बदल रहे. हालात में पहले से सचेत भी हो रह है। उसको ज़िंदगी के कड़वे सच की हक़ीक़त की पहचान होने लगी है। वह परंपरागत स्थापित कमज़ोर मूल्यों के विरुद्ध बग़ावत भी करता है।

उसकी मानसिकता बदल गई है। जल्दबाज़ी, तेज़-रफ्तारी के इस दौर में उसके पास समय कहाँ... वह मशीन की तरह चलता-फिरता, कई काम एक समय में करता है। वह जल्दी में है, संघर्ष करता है, चलने-फिरने की अवस्था में है। ऐसी अवस्था में, उसके मन की तृप्ति हेतु बड़े आकार वाले उपन्यास, महाकाव्य, लंबी कहानियाँ आदि पढ़ने के लिए उसके पास समय नहीं है। उसके लिए तो साहित्य का लघुरूप ही उचित है। साहित्य का ऐसा रूप जिसमें तीव्र तेजगति, बिजली के करंट जैसे चेतन, जागते हुए अहसास हों। जो तल्ख़, कचोटने वाले व्यंग्यात्मक कटा भरे अनुभवों से भरपूर हों। जिसमें गागर में सागर सी प्रस्तुति हो। इसीलिए, आज के तीव्र अहसासों वाले तेज़तर्रार व्यक्ति विशेष के लिए साहित्य का गद्य रूप, कहानी का लघु रूप ही, विशेष रूप से उचित, सार्थक व सजीव बनने में समर्थ हो सकता है।

लघुकथा, वर्तमान समय का एक लोकप्रिय स्वतंत्र रूप है, ऐसा साहित्य रूप जिसके रूप विधान के विषय में सामग्री का निर्माण किया जा रहा है। लघुकथा की स्थापना का यही प्रमाण है कि लेखक इसको लिखने लगे हैं, पाठक रुचि से पढ़ने लगे लगे हैं और आलोचकों ने इस ओर ध्यान देना आरंभ कर दिया है। इसके विषय में चर्चा होने लगी है। इस स्थापना-प्रक्रिया में लघुकथा के लेखक व आलोचक, दोनों को बड़ी सावधानी से कार्यशील होने की ज़रूरत है।

लघुकथा की अंतिम परिभाषा नहीं की जा सकती। लघुकथा की लघु परिभाषा यही दी जा सकती है कि यह कहानी का लघु रूप है। कहानी के लघु रूप द्वारा मानवीय दृष्टि, सामाजिक यथार्थ, ज़िंदगी की तलख हकीकतें, व्यक्ति के दुख-दुख को लघुकथा की कला द्वारा पेश करना ही लघुकथा है। लघुकथा ज़िंदगी के विशाल वस्तु का एक छोटा-सा हिस्सा है जिसमें थोड़ा-सा वर्णन और संवाद होता है जिसका तेज़ गति वाला आरंभ, मध्य और अंत होता है, जिसकी अपनी हक़ीक़त है। जिसका अपना आकर्षण है। इसका अपना सौंदर्य और अपनी ही कला है। लघुकथा में कम शब्द और अधिक प्रभाव, गहरे अर्थ, लोकोक्तियों वाला प्रभाव, तीक्ष्ण व्यंग्य, तकनीकी और चिंतन-मनन वाली शैली होती है। लघुकथा पहाड़ी चश्में जैसी फुर्ती, ख़ूबसूरती और सौंदर्य के समान है। लघुकथा ऐसे है, जैसे सूर्य की किरण, या छोटे मुँह से निकली बड़ी बात। लघुकथा पाँच उँगलियों के खुले पंजे की तरह नहीं, एक बंद मुट्ठी की तरह है जिसकी अपनी शक्ति, अपना ही प्रताप है।

यदि हम लंबी कहानी की पुरानी किस्म के ट्यूबों वाले बड़े डिब्बे वाले रेडियो से तुलना करे तो लघुकथा छोटा-सा ट्रांजिस्टर है। लघुकथा बिखरे हुए वस्त्रों की तरह नहीं है यह तो तह लगाए, प्रेस किए ख़ूबसूरत कपड़ों का छोटा-सा अटैची है। इसके लघु स्वरूप का भी अपना ही व्यक्तित्त्व है अपना ही चमत्कार है। यह एक ऐसा जादू है जो सिर पर चढ़कर बोलता है। इसका मुग्ध करने वाला मंत्र पाठकों के सचेत करता है। सोए हुए मनों में चिंगारियाँ पैदा करता है। गागर में भरने का प्रयत्न करता है। अच्छी लघुकथा, वह है जिसके पढ़ने के बाद यह अनुभव हो कि अचानक ही बिच्छू डंक मार गया हो, जैसे कि हथेली पर कोई आग रख दे। यह खिलने से पहले बंद फूल की तरह होती है जिसमें भाव की महक, वस्तु का बीज, कला की ख़ूबसूरती और ज़िंदगी की संवेदनशीलता छुपी होती है। अच्छी लघुकथा हमारी सोच को छूती है। वास्तविकता दिखाकर पाठकों की दृष्टि को बदलती है। अच्छी कहानी के कड़वे सच का प्रभाव पाठक के मन पर ऐसा पड़ता है जैसे गर्म तवे के ऊपर पानी की बूँदें।

लघुकथा की प्रस्तुति के लिए कलात्मक, तकनीकी प्रयोग किए जा सकते हैं। लघुकथा में आधुनिक विषयवस्तु की अभिव्यक्ति के लिए मिथकीय, लोकयुक्त ऐतिहासिक विधि का प्रयोग भी किया जा सकता है। प्रतीकात्मक शैली द्वारा पशु-पक्षियों, देवी-देवताओं, पुराण कथाओं के पात्रों के नामों, स्थानों और घटनाओं द्वारा सार्थक अच्छा प्रभाव डाला जा सकता है। बहुअर्थी, प्रतीकात्मक शब्दों के प्रयोग से गहरे अर्थ का निर्वहन हो सकता है। जैसे, सच्चे पुरुष के लिए युधिष्ठर, चालाक व्यक्ति के लोमड़, डरपोक के लिए गीदड़, उत्तम पात्र के लिए हँस, अन्याय करने वाले के लिए कौआ आदि बहुअर्थी शब्दों का प्रयोग, प्रस्तुत की जा रही विषयवस्तु को, प्रभावशाली एवं संक्षिप्त शैली द्वारा भरपूर अर्थ देने में समर्थ होता है। इसी प्रकार, लघुकथा में अपनी बोली के लोक मुहावरे, लोकोक्तियाँ और आख्यान उचित स्थान पर प्रयोग किए जा सकते हैं। रहस्यमय वर्णन, व्यंग्यात्मक शैली, संक्षिप्तता, संयमता, सरलता लघुकथा के लिए अति आवश्यक है। पाठकों की समझ के लिए अधूरी छोड़ी बात पूरी करने की विधि भी प्रयोग में लाई जा सकती है। परंपरागत लघुकथा की प्रस्तुति के स्थान पर लंघुकथा के लेखकों को नए प्रयोग करने चाहिए। पात्र, घटना, वर्णन प्रधान लघुकथा लिखी जा सकती है। लेखकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए। सांकेतिक शब्दों का प्रयोग इसलिए भी किया जा सकता है कि लघुकथा में वर्णन सहित विस्तारपूर्वक बात नहीं की जा सकती। बहुत कुछ पाठकों की समझ और कल्पना के ऊपर छोड़ दिया जाना चाहिए।

लघुकथा की प्रस्तुति प्रभावशाली, एकाग्र व सार्थक होनी चाहिए। यह लघुकथा के लेखक को सोचना चाहिए कि उसे लघुकथा में कही जाने वाली बात, घटना, प्रस्तुत किए जा रहे पात्र, किया जाने वाला वर्णन किस तरह, किस विधि अथवा रूप द्वारा करना है। लघुकथा की प्रस्तुति के लिए वह रूप ही उचित है जो पाठकों के मन के ऊपर अच्छा

व सार्थक प्रभाव डालता है। यह साधारण, व्यंग्यात्मक अथवा प्रतीकात्मक विधि भी हो सकती है। लघुकथा को कहानी ही रहने दिया जाए, लेखक इसको केवल लतीफ़ा न बनने दें। न ही यह केवल बातचीत का टुकड़ा बने।

लघुकथा के आकार के विषय में भी सोचने की ज़रूरत है। मेरा विचार यह है कि लघुकथा का आकार इतना लघु भी न हो, जिससे लघुकथा का मक़सद भी पूर्ण न हो। जिससे पाठकों की समझ में कुछ पड़े ही नहीं। इसका आकार इतना बड़ा भी न हो जिससे इसका लघु स्वरूप ही नष्ट हो जाए। कम-से-कम शब्द और अधिक-से-अधिक शब्दों की आकार-सीमा में लघुकथा को प्रतिबंधित न ही किया जाए, तो ठीक है। यह केवल लेखक की चेतन बुद्धि का ही कमाल होगा कि उसको अपनी लघुकथा की विषयवस्तु को किस रूप में ढालकर कितने आकार में पेश करना है। वैसे, यह बात भी मान लेनी चाहिए कि विषय अपना रूप स्वयं ही लेकर आता है। लेखक अपने चेतन अनुभव, सोच के अनुसार विषय का चुनाव करके, उसको अपनी कलात्मक भाषा के सुप्रयोग द्वारा प्रस्तुत करता है। कला का अर्थ है ही - ख़ूबसूरती। लघुकथा की ख़ूबसूरती, उसमें प्रस्तुत सार्थक, सजीव विषयवस्तु में भी है, उसकी कलात्मक प्रस्तुति में भी है। सार्थक विषयवस्तु और सजीव कलात्मक स्वरूप, दोनों लघुकथा के लिए अति ज़रूरी है।

पंजाबी-लघुकथा एक विवेचन: इतिहास

कहानी साहित्य के रूप का वह हिस्सा है जो लोकधारा की कोख में से जन्म लेकर, अपने अंदर सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और लोक जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्ति देता रहा है। पुराण कथाओं, परी कथाओं, प्रेत-कथाओं की में लोकप्रियता इस बात की सूचक है कि कहानी का जन्म आदिकाल की सभ्यता हुआ है। चिड़िया और कौआ, चालाक लोमड़ी, गीदड़ और गीदड़ी की लोक कहानियाँ लघुकथा के आरंभिक रूप हैं। यद्यपि, आधुनिक लघुकथा उन्नीसवीं ईसवी से लेकर अब तक विकसित रूप धारण करती आ रही है। परंतु, लघुकथा आज के पूँजीवादी युग की तेज़ रफ़्तार ज़िंदगी में पैदा हुई प्रवृत्तियों और रुचियों की ज़रूरत के अनुसार वजूद में आई है।

आज के मानव के यथार्थ को जब लघुकथा का लेखक लघुरूप में प्रस्तुत करता है तो जल्दी में भ्रमण करता हुआ, डरा हुआ, भागता, दौड़ता, घबराया हुआ, निराश व्यक्ति उसको पढ़ने की चेष्टा करता है। लघुकथा समय की ज़रूरत के अनुसार अस्तित्त्व में आकर विकसित हुई है। क्योंकि प्रत्येक युग में साहित्य रूप बनते, विकसित होते और आलोप होते रहते हैं। लेखक साहित्य-रूपों के निर्माण हेतु प्रयोग करते रहते हैं। लघुकथा भी ऐसे प्रयोग की देन है।

पंजाबी-लघुकथा पंजाबी जीवन में किसी न किसी रूप में निरंतर विद्यमान रही है। लोक-कहानियों, जीव-जंतुओं की कहानियों, पशु-पक्षियों की कहानियों के लघुरूप

अथवा टोटके हमारी मौखिक बातों का हिस्सा बने रहे हैं। हमारी पुरातन कथाएँ, धार्मिक क़िस्से अनुष्ठान और मिथकीय कथाओं में शिक्षा का एक कथाखंड किसी-न-किसी रूप में मिलता है। मिरासियों के टोटके और कवीसरों के प्रसंगों से बाहरी कथारूप लघुकथा के अविकसित रूप कहे जा सकते हैं। समय की ज़रूरत के अनुसार पंजाब में पहले आधुनिक छोटी कहानी के बाद अब मिन्नी कहानी (लघुकथा) ही प्रचलित हो रही है। वर्तमान की माँग भी यही है कि ज़्यादा-से-ज़्यादा बात संक्षेप में कही जाए। इसीलिए, पंजाबी में लोक जीवन की बदली हुई मानसिकता के अनुरूप ही, लघुकथा के वर्तमान स्वरूप का वजूद में आना संभव हो सका है।

प्राप्तियाँ

पंजाबी साहित्य के कहानी रूप में यद्यपि लघुकथा के अविकसित रूप पहले भी खोजे जा सकते हैं। परंतु, आधुनिक लघुकथा का विकसित रूप 1970 ई. के बाद ही प्रचलित हुआ है। यद्यपि, भारत की हिंदी, बंगाली, उर्दू भाषाओं में यह कई वर्ष पहले लिखी जाने लगी। अन्य भाषाओं की लघुकथाएँ पंजाबी-लघुकथा के लिए अवश्य ही प्रेरणा का स्रोत बनीं। पंजाबी-लघुकथा की प्राप्तियों कावर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है:

1. पंजाबी कहानी के वह लेखक जिन्होंने अपनी आधुनिक कहानियों को लघु रूप में पेश किया। जैसे गुरबख्श सिंह 'प्रीतलड़ी' उसकी पुस्तक 'ज़िंदगी के स्कूल से...' की यादें दर्शाने वाली घटनाएँ, लघुकथा का आरंभिक रूप है। इसी तरह डॉ. बनजारा वेदी की पुस्तक 'एक घूँट रस का' की कहानियों में लघुकथा वाला रस है। अमर सिंह की पुस्तक 'सीपी और सागर' में कई कहानियों के लघु रूप मिलते है। राम सरूप अणखी की पुस्तक 'दीवार में उगा वृक्ष' की कई कहानियाँ लघु आकार वाली है। इसी तरह प्रो० हमदर्दवीर नौशहरवी के कहानी संग्रह 'नीरों बसरी बजा रहा था', 'खंडित मनुष्य की गाथा', 'सलीब पर टँगा मनुष्य', 'बर्फ़ के आदमी' और 'सूरज', डॉ. जोगिंदर सिंह की पुस्तक 'नायक की मौत', महिंद्र हुज़ूर का कहानी संग्रह 'शीश महल', डॉ. एस० तरसेम की 'आज के मसीहे' आदि में लघुकथाओं के दर्शन होते हैं।
2. पंजाबी कहानी के वे लेखक जिन्होंने लघुकथाओं के संग्रह प्रकाशित करवाए हैं, उनका वर्णन अगले पृष्ठ पर दिया जा रहा है:

लेखक	पुस्तक का नाम	प्रकाशन वर्ष
सतवंत कैथ	बर्फी दा टुकड़ा	1972
	कीड़ियाँ दा भौण	1986
	फेर की होया?	1988
दलीप सिंह भूपाल	ग्रहण्या सूर्य	1973
भूपिंदर सिंह, पी.सी.एस.	सौ पत्त मछली दे	1979
दर्शन मितवा	संविधान रोंदा है	1980
शरन मक्कड़	खुंडी धार	1981
डॉ. अमर कोमल	चिणगाँ	1983
	वेदन कहिए किसु	1988
सुलक्खण मीत	सुलगती बर्फ़	1985
आर. एस. आज़ाद	सोचों का सागर	1985
मोहन शर्मा	पूजा	1986
	सपनों के खंडहर	1988
कर्मवीर सिंह	छोटी बातें, बड़ी बातें	1986
जिंदर	नारा	1987
धर्मपाल साहिल	नरगिस	1988
संपादित पंजाबी लघुकथा संग्रह		
रौशन फूलवी (संपादक) ओमप्रकाश गासो (चयनकर्ता)	तरकश	1973
अनवंत कौर और शरन मक्कड़	अब जूझण को दाव	1975
के. मनजीत	इनसान बिकते हैं	1977
जिंदर व निरंजन बोहा	हड़ताल जारी है	1987

लेखक	पुस्तक का नाम	प्रकाशन वर्ष
अजीत सिंह कक्कड़	जन-साहित (मिन्नी कहानी अंक)	जुलाई, 1980
पंजाबी में अनूदित अन्य भाषाओं के लघुकथा संग्रह		
जयंती मकवाणा (गुजराती) (अनुवादक -रामसरूप अणखी)	'अ' नाम का इनसान (गुजराती)	1987
विक्रम सोनी (मूल संपादक) (अनुवादक-अशोक भाटिया)	लघु आघात (त्रैमासिक)	1987

इनके अलावा, पंजाबी-लघुकथा भारतीय भाषाओं में निरंतर अनूदित होकर दूसरे प्रांतों' के पाठकों की रुचि को तृप्त कर रही है। पंजाबी-लघुकथा लेखकों की लघुकथाएँ 'हिंदुस्तान टाइम्स', 'सारिका', 'दैनिक ट्रिब्यून', 'जनसत्ता', 'आजकल' आदि पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होने लगी है।

प्राप्तियों का ज़िक्र करते समय उन पंजाबी कहानी लेखकों का वर्णन करना भी अति आवश्यक है जो दस-पंद्रह वर्षों से लघुकथा लेखन तो कर रहे हैं परंतु उनका तक लघुकथा संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ। उन नामों में सर्व श्री डॉ. श्याम सुंदर दीप्ती, श्याम सुंदर अग्रवाल, डॉ. जोगिंदर सिंह निराला, रौशन फूलवी, सतवंत कैथ, जगदीश अरमानी, कर्मवीर सिंह, यादविन्दर सिंधु, प्रीतम सिंह राही, डॉ. दविन्द्र बिमरा, नूर संतोखपुरी, हरभजन खेमकरनी, रमेश बागड़ी, दलजीत समाधवी, गुलवंत मलौदवी, विरसा सिंह कंबोज, प्रीतम बराड़ लेंडे, हरपालजीत पाली, गुरमेल मडाहड़, गुरदयाल दलाल, राजकुमार गर्ग, भूपेन्द्र आष्ट, गुरचरण सिंह गुलशन, डॉ. तेजवंत मान, रामसरूप अणखी, अमर यादव, बलविन्द्र बालम, गुरपाल लिट, रणजीत माधोपुरी, रण जीत ग्रेवाल, अशोक भाटिया, अशोक चावला, कृष्ण कुमार रत्तू आदि नाम शामिल किए जा सकते हैं। पंजाबी में लघुकथा की प्राप्ति इस असलियत में है कि पंजाबी के मुख्य आलोचकों के विरोध के बाद भी यह स्थापित हो रही है। 'पंजाबी-लघुकथा: प्राप्तियाँ और संभावनाएँ' मेहताब-उद-दीन की पहली आलोचनात्मक पुस्तक है जिसमें पंजाबी-लघुकथा पर विस्तार सहित चर्चा की गई है। इस पुस्तक का छपना अपने आपमें पंजाबी-लघुकथा की विशेष प्राप्ति है। अब पंजाबी-लघुकथा पर आलोचना होनी आरंभ हो गई है। 'खोज पत्रिका' पंजाबी विश्वविद्यालय, 'पंजाबी दुनिया' भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला और अन्य मासिक पत्रों में पंजाबी-लघुकथा संबंधी लेख छपे हैं और छप रहे हैं। दूरदर्शन केंद्र और आकाशवाणी, जालन्धर से लघुकथा पर चर्चा-परिचर्चा आयोजित की जा रही हैं। पंजाबी के मासिक पत्र, दैनिक पत्रों में लघुकथा को विशेष स्थान मिला है। अब कोई भी पंजाबी का ऐसा दैनिक नहीं है जो अपने साहित्य में लघुकथा को स्थान न देता हो।

पंजाबी-लघुकथा लेखक मंच, पंजाब (रामपुरा फूल) की स्थापना, लघुकथा की स्थापति का जीता-जागता प्रमाण है। इस मंच का उद्देश्य पंजाबी-लघुकथा के विकास के लिए है। इस मंच के भविष्य के लिए किए जाने वाले कार्यों में कथा संग्रह प्रकाशित करना, बेचना, लघुकथा गोष्ठी, समारोह आदि आयोजित करना, लघुकथा लेखकों की वर्कशॉप लगाना, अनुवाद-कार्य आरंभ करना, लघुकथा की पोस्टर-प्रदर्शनी लगाना आदि हैं जो कि लघुकथा के विकास के लिए अति आवश्यक हैं। वे दिन दूर नहीं जब पंजाबी-लघुकथा अपना विकास का रास्ता तय करते हुए दूसरी भाषाओं की लघुकथाओं के साथ-साथ चलने के समर्थ हो सकेगी। जब, पंजाब की यूनिवर्सिटीज़ के विद्यार्थी पंजाबी-लघुकथा विषय पर एम.फिल, पी.एचडी., शोधकार्य करने लगेंगे।

पंजाबी-लघुकथा : भविष्य व संभावनाएँ

पंजाबी-लघुकथा की प्राप्तियों का लेखा-जोखा करने के बाद यह संभावना बनती है कि इस साहित्य विधा का भविष्य उज्ज्वल और आशान्वित करने वाला है। पंजाबी-लघुकथा को विकास के रास्ते पर डालने के लिए अभी और अनेक पड़ाव तय करने की ज़रूरत है। आज समय आ गया है कि पंजाबी-लघुकथा को समय का साथी एवं साहित्य-रूप बनने के लिए सफल और सार्थक प्रयत्न किए जाएँ। इस निर्णय पर किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि पंजाबी-लघुकथा स्थापित ही नहीं हुई। ज़रूरत तो इस बात की है कि पंजाबी के लघुकथा लेखकों को इस विषय की अधिक उन्नति के लिए साहित्यिक-स्तर पर यत्न करने चाहिए। पंजाबी लकथा के भविष्य के लिए मैं निम्नलिखित सुझाव पेश कर रहा हूँ, इन पर विचार करके उन्हें अमल में लाया जाना चाहिए:

1. पंजाबी-लघुकथा लेखक मंच को पंजाब स्तर पर कार्यशील होना चाहिए जिसके लिए यह आवश्यक है कि पंजाब-स्तर के लघुकथा लेखकों को एक माला में पिरोया जाए। इस मंच द्वारा लघुकथा के लेखकों की प्रशिक्षण वर्कशॉप आयोजित की जाए। इसमें गोष्ठियाँ, विचार-विमर्श, प्रयोग-प्रदर्शनियाँ, पोस्टर-प्रदर्शनियाँ की जा सकती हैं।
2. पंजाबी के लघुकथा लेखकों को हिंदी, उर्दू के लघुकथा लेखकों और इन भाषाओं में, भारत की अन्य भाषाओं की लघुकथाओं का अध्ययन एवं पाठ करना चाहिए। जिससे दूसरी भारतीय भाषाओं की लघुकथाओं के वस्तुपक्ष और रूप पक्ष आदि लाने की पहचान की जा सकती है।
3. पंजाबी में अन्य भाषाओं की लघुकथाओं का अनुवाद किया और करवाया जाना चाहिए। पंजाबी की लघुकथाओं को अन्य भाषाओं में अनुवाद करके प्रकाशित करवाया जाए।
4. पंजाबी-लघुकथा लेखक मंच, पंजाब की ओर से यह माँग की जाए कि पंजाब के विश्वविद्यालयों के पंजाबी विभागों द्वारा पंजाबी-लघुकथा दरबार, पंजाबी-लघुकथा संबंधी सेमीनार, गोष्ठियाँ आदि आयोजित किए जाएँ। इन अदारों की तरफ़ से पंजाबी-लघुकथा संबंधी शोधकार्य करवाए जाएँ।
5. पंजाबी-लघुकथा लेखकों को स्वयं इस विधा में अभिव्यक्त किए जाने वाले विषय-वस्तु की विविधता और कलापक्ष संबंधी प्रयोग करते रहना चाहिए। पंजाबी-लघुकथा में अधिकतर सामाजिक समस्याओं का यथार्थ रूप पेश किया गया है। कितना अच्छा हो यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मानसिक, कामुक तनावग्रस्त समस्याओं से पैदा हुए मानवीय प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति भी पंजाबी-लघुकथा का विषय बने।
6. पंजाबी-लघुकथा की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए लेखकों की तरफ़ से सुंदर सार्थक शब्दों, संवादों एवं वर्णन आदि प्रस्तुत करने के अभ्यास भी किए जाने चाहिए। लेखकों को यह समझ लेना चाहिए कि पंजाबी-लघुकथा में वस्तु की महत्ता के साथ-साथ उसकी प्रस्तुति की कलात्मक अभिव्यक्ति भी ज़रूरी है। संक्षिप्त, सरल, सम्मपूर्ण, नाटकीय, व्यंग्यमयी, कटाक्षपूर्ण अभिव्यक्ति के लिए परंपरागत विधियों के स्थान पर नई भाषा विधियों की भी खोज की जानी चाहिए।
7. लघुकथा में कल्पना, कल्पनाशक्ति, कल्पना-चित्र, अनोखी कल्पना या अनोखे विचार, तरंग, मनमौज की महत्ता को समझकर ही इसका उचित प्रयोग इस दृष्टि से किया जाए कि यथार्थ अदृश्य न हो। लघुकथा ज़िंदगी में से, ज़िंदगी के लिए, ज़िंदगी की ही महसूस हो। लघुकथा की प्रस्तुति बेशक साधारण हो या अद्भुत, किंतु स्वाभाविक लगे।
8. पंजाबी की लघुकथा विधा का विरोध करने वाले आलोचक इसका विरोध करने के लिए ही आलोचना न करें, बल्कि पंजाबी-लघुकथा को अच्छी सार्थक, वैज्ञानिक आलोचना द्वारा दिशा भी प्रदान करें। पंजाबी के आलोचक, पैदा हो रहे पंजाबी-लघुकथा लेखकों को अच्छी राय और सार्थक दिशा प्रदान करके उत्साहित कर सकते हैं। ऐसी आलोचना न की जाए कि नए उभर रहे पंजाबी-लघुकथा लेखकों की कमर ही तोड़ दी जाए।
9. सामूहिक और साझ-स्तर पर पंजाबी-लघुकथा के प्रकाशन हेतु प्रकाशन-संस्था बनाई जा सकती है। यदि पंजाबी-लघुकथा लेखक मंच, पंजाब यह कार्य संपन्न करने में समर्थ बन सके तो अच्छी बात है; नहीं तो पंजाबी-लघुकथा की पुस्तकें सस्ते और लघु पॉकेट रूप में छापने के प्रयत्न किए जाने चाहिए।
10. भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला प्रत्येक वर्ष अच्छी गद्य पुस्तकों पर पुरस्कार प्रदान करता है। गद्य पुस्तकों की लड़ी में पुरस्कार देने के लिए पंजाबी-लघुकथा को विशेष रूप में रखा जाना चाहिए।

गोष्ठी समाचार
पंजाबी-लघुकथा पर रामपुरा फूल (पंजाब) में विशेष साहित्यिक समारोह

'पंजाबी मिन्नी कहानी लेखक मंच, पंजाब' की ओर से दिनांक 09-10-1988 को भारतीय माडल स्कूल, रामपुरा फूल में विशेष साहित्यिक समारोह का आयोजन किया गया। समारोह में पंजाब, हरियाणा व दिल्ली से आए लेखकों ने भाग लिया। समारोह का उद्घाटन प्रसिद्ध विद्वान् भगत सिंह हीरा ने किया। मंच पर उनके साथ डा. अमर कोमल, सुभाष नीरव, अशोक भाटिया, रौशन फूलवी, डॉ. श्याम सुंदर दीप्ति तथा हरचरण सिंह कैंबलपुरी सुशोभित हुए।

समारोह के पहले सत्र का संचालन निरंजन बोहा ने सँभाला। इस सत्र में डा. अमर कोमल ने 'पंजाबी मिन्नी कहानी: भविष्य की संभावनाएँ', अशोक चावला ने 'पंजाबी मिन्नी कहानी, सीमाएँ व समस्याएँ', तथा अशोक भाटिया ने 'पंजाबी मिन्नी कहानी: ख़तरे व चुनौतियाँ विषयों पर अपने-अपने आलेख पढ़े। आलेखों पर डा. जोगिंद्र सिंह निराला, सुभाष नीरव, बलदेव बबीहा, जगदीश अरमानी, चमन सिंह चमन, हरभजन सिंह कैंबलपुरी तथा श्याम सुंदर अग्रवाल ने क्रमश: खुलकर बहस की। आलोचकों का विचार था कि पंजाबी मिन्नी कहानी कितनी भी जनमुखी क्यों न रही हो, कल्याणकारी सिद्ध नहीं हो सकी। लेखकों को प्रचलित विषयों से हटकर नए विषयों का चुनाव करना चाहिए। दैनिक पत्रों व पत्रिकाओं के मिन्नी कहानी प्रति रवैये पर भी बहस हुई।

डा. अमर कोमल, अशोक भाटिया, सुभाष नीरव तथा अशोक चावला को उनके मिन्नी कहानी के प्रति दिए गए योगदान के लिए सम्मानित किया गया। प्रिंसीपल भगतसिंह हीरा ने मासिक पत्रिका 'सतिसागर' के 'मिन्नी कहानी अंक' का तथा सुभाष नीरव ने मिन्नी कहानी की नई पत्रिका 'मिन्नी' का विमोचन किया।

समारोह के दूसरे सत्र को 'मिन्नी कहानी दरबार' का नाम दिया गया। इस सत्र का संचालन डा. निराला ने किया। मिन्नी कहानी रचना-पाठ के दौरान कु. नरिंद्र भल्ला, पूजा प्रभाकर, बलविंद्र कौर, निरंजन शर्मा सेखा, गुलवंत मलौदवी, बलदेव बबीहा, हरजिन्द्र सूखोलिया, हरदम सिंह मान, सतवंत काटल, अशोक भाटिया, सोम महतो, विजय बरगाड़ी, बचित्र सिंह चुधवाला, अशोक बरगाड़ी, भूपिंदर पाल सिंह, इक़बाल घारू, रेशम गिल वांदर, गीटन डोड, सुभाष नीरव, डॉ. जोगिंद्र सिंह निराला, डॉ. श्याम सुंदर

दीप्ति, श्याम सुंदर अग्रवाल, निरंजन बोहा तथा रौशन फूलवी आदि ने अपनी-अपनी लघुकथाओं का पाठ किया।

समारोह में माँग की गई कि दूरदर्शन जालंधर पर 'कवि दरबार' की तरह 'मिन्नी कहानी दरबार' का आयोजन भी किया जाए। एक प्रस्ताव में भाषा विभाग, पंजाब व साहित्य अकादमी से माँग की गई कि सफल मिन्नी कहानी लेखकों को सम्मानित किया जाए। पंजाब के तीनों विश्वविद्यालयों से निवेदन किया गया कि पाठ्य-पुस्तकों में मिन्नी कहानियों को भी योग्य स्थान दिया जाए. तथा मिन्नी कहानी के विषय पर भी शोधकार्य करने की स्वीकृति दी जाए। पंजाब यूनियन ऑफ़ जर्नलिस्ट्स की ओर से 'मंच' के रहनुमा रौशन फूलवी के इलाज के लिए पाँच सौ रुपये भेंट किए गए। इस अवसर पर श्याम सुंदर अग्रवाल की ओर से 'मिन्नी कहानी पोस्टर प्रदर्शनी' का आयोजन किया गया। इस प्रदर्शनी में दर्शकों को पंजाबी मिन्नी कहानियों के साथ-साथ-हिंदी, उर्दू, अँग्रेज़ी, रूसी, गुजराती, नेपाली व मलयालम भाषाओं की चुनिंदा रचनाओं का पंजाबी अनुवाद भी पढ़ने को मिला। इस प्रदर्शनी को समारोह में उपस्थित सभी लेखकों-श्रोताओं द्वारा सराहा गया।

प्रस्तुति : अजय विश्वास
अशोका माडल हाई स्कूल
कोटकपूरा-151204 (पंजाब)

प्रतिक्रियाएँ

'प्रयास' का कहानी अंक मिला। मन मुग्ध हो उठा। इस अद्भुत प्रयास के लिए बधाई। जिस सफ़ाई एवं परिश्रम से तुमने इसे प्रकाशित किया है, वह श्लाघनीय है। हिंदीतर कहानियों को स्थान देकर भी तुमने सराहनीय कार्य किया है। निश्चय ही, व्यावसायिक पत्रिकाओं की चमक-दमक और उनकी घटती साख के लिए 'प्रयास' चुनौती सिद्ध होगी। यदि इसे केवल कथा-साहित्य तक ही सीमित रहने दें तो आशा है, यह भविष्य में और भी अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो।

-डॉ. रूपसिंह चंदेल, 10-ए/22, शक्तिनगर, दिल्ली-110007

'प्रयास' का कहानी अंक मिला। आभार। आपका प्रयास निश्चय ही सराहनीय है।

-डॉ. हरदयाल, एच-50, पश्चिमी ज्योतिनगर, शाहदरा, दिल्ली-32

प्रयास-7 (कहानी अंक) मिला। एक अच्छे व सार्थक अंक के लिए बधाई। साँड़ (विजय) बिद्दा बुआ (रूपसिंह चंदेल) तथा अब और नहीं (सुभाष नीरव) ने अत्यधिक प्रभावित किया। भूख का भूगोल (ज्ञान प्रकाश विवेक) भी ठीक रही। चीख़ें (गुरमेल मडाहड़) में लेखक अपनी बात स्पष्ट नहीं कर पाया। हस्तक्षेप (श्याम सुंदर चौधरी) अपनी कमज़ोरियों के कारण प्रभाव नहीं छोड़ पाई। अँधेरी सुरंग में (कमलेश भारतीय) तथा टीले का सबक़ (रविदत्त मोहत्ता) साधारण हैं।

-श्याम सुंदर अग्रवाल, 252, शास्त्री मार्किट, कोटकपूरा-151204 (पंजाब)

प्रयास-7 (कहानी अंक) में रमेश बत्तरा, गुरमेल मडाहड़, श्याम सुंदर चौधरी, सुभाष नीरव की कहानियों के साथ-साथ कहानी पर सवाल उठाते लेख अच्छे लगे। श्रम सार्थक है। साफ़-सुथरा सहेजने लायक़ अंक है। इसकी चर्चा जालंधर दूरदर्शन के 'रचना' (हिंदी साहित्यिक कार्यक्रम) में भी मैंने की है। बधाई स्वीकारें।

-कमलेश भारतीय, शारदा मोहल्ला, नवाँ शहर, दोआबा-144514 (पंजाब)

प्रयास-7 (कहानी अंक) मिला। इतने सुंदर अंक के लिए बधाई।

-अंजना अनिल, स्मृति सदन, 28, रघुमार्ग, अलवर-301001 (राज.)

'प्रयास' का कहानी अंक मिला। अंक शानदार है, मेरी बधाई स्वीकारें।

-कमर मेवाड़ी, सं. 'संबोधन', काकरौली-313824 (राज.)

आपका 'प्रयास' सचमुच ही सराहनीय है। अनेक उत्कृष्ट कहानियाँ इसमें पढ़ने को मिलीं। कृपया इसे जारी रखें।

-वेद प्रकाश बंसल, साहित्य संपादक 'दैनिक ट्रिब्यून', चंडीगढ़।

प्रयास-7 (कहानी अंक) मिला। आभारी हूँ। 'साँड़' कहानी बहुत पहले हिंदुस्तान में पढ़ी थी। इस कहानी के विषय में सुरेश यादव का यह कहना सही है कि यह कहानी इस आरोप को पूरी तरह झुठलाती है कि परिवेश और परिस्थितियाँ भिन्न होने के कारण यह कहानी भारतीय जनमानस को उद्वेलित नहीं करेगी। अशोक लव का पत्र भी विचार योग्य है। 'प्रयास' पहली बार देखने को मिली, अच्छा लगा कि आप इतने सुंदर ढंग से निकाल रहे हैं।

-श्याम सुशील, 'हिंदुस्तान टाइम्स', नई दिल्ली।

'प्रयास' का दिस. 87 (कहानी अंक) मिला। इससे पूर्व भी कुछ अंक मिले थे। इस अंक ने तो इतना प्रभावित किया है कि 'प्रयास' जैसी लघु पत्रिका को बड़ी पत्रिका कहने का मन होता है। यह पत्रिका अब बड़ी इसलिए भी है क्योंकि इसे प्रस्तुत करने में आपका तथा आपके लेखकों का जो बड़ा सहयोग है, वे निष्ठा, साहस व समर्पण का प्रतीक है। आपकी पीढ़ी में ये गुण देखकर वर्तमान और भविष्य के प्रति विश्वास पैदा होता है कि आपकी पीढ़ी पूर्णरूप से अपने लेखकीय दायित्त्व को निभा सकेगी। इतने सुंदर अंक के लिए मेरा साधुवाद लें।

-डॉ. कमलकिशोर गोयनका, ए-98, अशोक विहार, फेज- प्रथम, दिल्ली-52

विजय की कहानी 'साँड़' अपने विस्तृत कैनवस के कारण ही नहीं बल्कि संवेदना के स्तर पर भी काफ़ी आकर्षित करती है। 'थप्पड़', (रमेश बत्तरा) अपनी संपूर्णता में अपील नहीं कर पाती फिर भी इसे एक बेहतर कहानी कहना होगा। कमलेश भारतीय, ज्ञान प्रकाश विवेक, रविदत्त मोहता की कहानियों में विविधता होते हुए भी प्रस्तुतीकरण बहुत अधिक आकर्षित नहीं करता। 'बिद्दा बुआ' (रूपसिंह

चंदेल) अंतिम पंक्तियों में एक बहुत अहम सत्य को उद्घाटित करने के कारण मार्मिक बन पड़ी है। 'अब और नहीं?' (सुभाष नीरव) एक रिटायर्ड व्यक्ति की त्रासदीपूर्ण पारिवारिक स्थिति का बहुत सटीक एवं प्रभावशाली चित्रण किया गया है। यह कहानी काफ़ी असरदार तरीक़े से संवेदित करती है। सुरेश यादव व अशोक शुक्ल अपनी ज़िम्मेदारियों को बख़ूबी निभाते नज़र आते हैं।

-श्याम सुंदर चौधरी, एच-61/4, साहनी कॉलोनी, कैंट, टैगोर रोड, कानपुर।

प्रयास-7 (कहानी अंक) पढ़कर अभिभूत हूँ। यदि इसे बड़बोलापन न मानो तो यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं है कि प्रयास अभी किसी भी साहित्यिक पत्रिका से कम नहीं है। स्तर के मामले में इसका हर नया अंक सुखद, चौंकाने वाला सिद्ध हो रहा है।। इस अंक में अशोक शुक्ल का आलेख बहुत ही पसंद आया और मैं उनके विचारों से काफ़ी या हद तक सहमत हूँ। रमेश बत्तरा व ज्ञान प्रकाश विवेक की कहानियाँ विशेष तौर पर पसंद आईं। समीक्षाएँ कामचलाऊ हैं, जबकि इसपर परिश्रम होना चाहिए।

-सतीशराज पुष्करणा, सं. 'दिशा', महेंद्रू, पटना-800006 (बिहार)

रंग-बिरंगी पत्रिकाओं के शौक़ीनों को साइक्लोस्टाइल्ड प्रयास भले ही रास न आए परंतु साहित्य अनुरागी इसे पढ़कर तृप्ति अनुभव करेंगे। पत्रकारिता जगत् में प्रयास एक क्रांतिकारी प्रयास है। सभी कहानियाँ जो यथार्थ की भावभूमि को रेखांकित करती हैं, उत्कृष्ट लगीं। रूपसिंह चंदेल और सुभाष नीरव की कहानियाँ आज के समाज में पुरानी पीढ़ी के दर्द को उकेरने में सफल हैं। 'थप्पड़' (रमेश बत्तरा) में एक रिक्शेवाले की प्रतिक्रिया को बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषित किया गया है।

-रमाकांत श्रीवास्तव, सं. 'गरिमा भारती', एन-6,/एल-96, लोकविहार, कुर्सी रोड, अलीगंज, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

प्रयास का कहानी अंक प्रभावित करता है। बड़ी-बड़ी पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों से अधिक स्तरीय और जीवंत कहानियाँ इसमें हैं। डॉ. विजय कपूर का पत्र सत्य को उजागर करता है।

-अनिरुद्ध प्रसाद विमल, सं. 'समय', समय साहित्य सम्मेलन, पुनसिया, भागलपुर-9

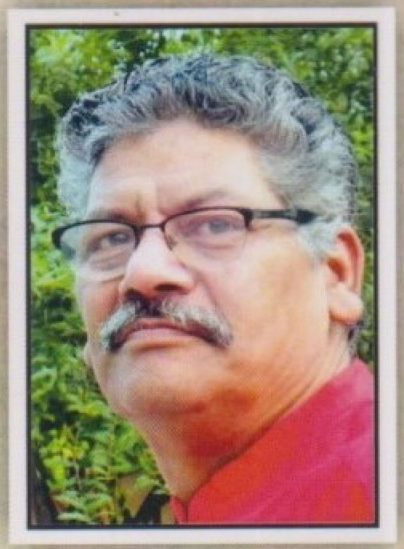

आज से लगभग साढ़े तीन दशक पूर्व वर्ष 1988 में सुभाष नीरव के संपादन में अनियतकालीन पत्रिका 'प्रयास' का चक्रमुद्रित (साइकलोस्टाइलड) 'पंजाबी-लघुकथा अंक' प्रकाशित हुआ था। पंजाबी-लघुकथा के हिंदी अनुवाद को लेकर इतने बड़े पैमाने पर संभवत: यह प्रथम किंतु बेहद सफल प्रयास था। मैं यह सोचकर हैरान होता हूँ कि जिस जमाने में इक्का-दुक्का ही फोन हुआ करते थे और इंटरनेट अभी अस्तित्त्व में भी नहीं आया था, इतनी भारी संख्या में रचनाएँ कैसी जुटाई गई होंगी। इतनी रचनाओं और आलेखों के लिए इतने अनुवादक कैसे ढूँढ़े होंगे और साइकलोस्टाइल मशीन पर एक-एक स्टेंसिल काटकर एक-एक पन्ने को जोड़ना कितना श्रमसाध्य कार्य रहा होगा। बहरहाल, इसकी तो केवल कल्पना ही की जा सकती है। किंतु हर पन्ने पर उनका श्रम दिखाई देता है। एक शिक्षार्थी के रूप में मेरे लिए यह कृति इसलिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकिय एक तो यह लगभग लुप्तप्राय: हो चुकी थी, यहाँ तक कि सुभाष नीरव के पास भी इसकी प्रति उपलब्ध नहीं थी। दूसरा, मैं आज की युवा पीढ़ी को उस काल की पंजाबी-लघुकथा के लब्बो-लुबाब से परिचित करवाना चाहता था। सौभाग्य से मुझे इसकी प्रति डॉ. श्याम सुंदर दीप्ति से प्राप्त हो गई। अत: मैंने इसे पुन: प्रकाशित करने का निर्णय लिया ताकि इस धरोहर को सहेजकर भविष्य के लिए सुरक्षित रखा जा सके। पूर्व में भी कई महत्त्वपूर्ण दुर्लभ पुस्तकों के पुनर्प्रकाशन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो चुका है। इनमें डॉ. सतीशराज पुष्करणा द्वारा संपादित 'लघुकथा: बहस के चौराहे पर' (1983), रमेश जैन व भगीरथ और द्वारा संपादित हिंदी के सर्वप्रथम साझा लघुकथा संग्रह 'गुफाओं से मैदान की ओर' (1974) अशोक लव का लघुकथा संग्रह 'सलाम दिल्ली' (1991), रौशन फूलवी द्वारा संपादित पंजाबी के सर्वप्रथम साझा लघुकथा संग्रह 'तरकश' (1973), डॉ. जसबीर चावला का लघुकथा संग्रह 'नीचे वाली चिटखनी (1992) और माधव नागदा का लघुकथा संग्रह 'आग' (1998) आदि शामिल हैं। किंतु एक पंजाबी भाषी होने के कारण मुझे 'प्रयास' के पुनर्प्रकाशन पर मुझे सर्वाधिक प्रसन्नता हुई। अंत में मैं डॉ. श्याम सुंदर अग्रवाल का ह्रदयतल से आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मुझे 'प्रयास' की प्रति उपलब्ध करवाई। मैं इसके पुनर्प्रकाशन की सहर्ष अनुमति प्रदान करने हेतु सुभाष नीरव जी का भी आभारी हूँ।

योगराज प्रभाकर
संपादक: 'लघुकथा कलश'
53, 'ऊषा विला' रॉयल एनक्लेव
एक्सटेंशन, डीलवाल, पटियाला
चलभाष: 98725-68228